

**TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_176430

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

लक्ष्मी नारायणसिंह ईश्वर

लंकादहन - 1950-

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

OUP—707—25-4-81—10,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. ^{H81}
 L19L Accession No. P.G.H6364

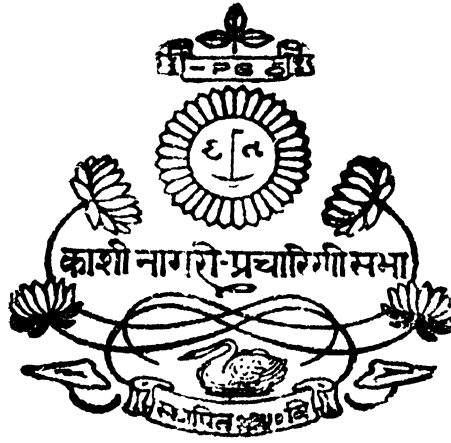
Author — कक्षीनारायण सिंह 'इश'

Title कंकदहन . 1950

This book should be returned on or before the date last marked below

लंका-दहन

स्व० चौधरी लक्ष्मीनारायण सिंह 'ईश'



काशी नागरीप्रचारिणी सभा

प्रकाशक : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
मुद्रक : सदाशिव राव चितले, आदर्श प्रेस, काशी
प्रथम संस्करण : सं० २००७ वि० : १००० प्रतियाँ
मूल्य : ~~५००~~ ५००)



स्व० चौधरी लक्ष्मीनारायण सिंह 'ईश'

घपनी और से

बरसों पहले ईश जी ने यह संकल्प किया था कि वाल्मीकि रामायण के इस प्रसंग [श्री रामचंद्रजी से मुद्रिका लेकर जानकी जी को देना और श्री जानकी जी से उनकी चूड़ामणि लाकर श्रीरामचन्द्र जी को दे देना] पर एक काव्य लिखा जाय । सोत यह था कि रत्नाकर जी के उद्धवशतक के समान एक ऐसा काव्य प्रस्तुत किया जाय जिसमें व्रजभाषा और उनकी परंपराओं के निर्वाह के साथ-साथ काशी में प्रयुक्त होनेवाली अवधी का भी पुट रहे । यह शातव्य है कि रत्नाकर जी की रचनाओं में काशी की काव्यधारा में बहनेवाली अवधी मिश्रित व्रजभाषा का टकसालीपन नहीं रह गया है, प्रत्युत् उनमें ठेठ व्रजभाषा का शास्त्रीय ठाठ ही अधिक दिखाई पड़ता है । अतः इसी संकल्प को मूर्त रूप देने के लिये “लंकादहन” का श्रीगणेश हुआ ।

प्रकाशन और विज्ञापन से दूर लंकादहन के सर्ग छंदबद्ध होने लगे और कथा का प्रवाह धीरे-धीरे पाँच सर्ग तक पहुँचा, उसी समय ईश जी को काशी छोड़ कर राजापुर (जहाँ उनकी जमींदारी है) चले जाना पड़ा । वहाँ पहुँचकर तो वे वहाँ के हो हो रहे । निरे प्रपंचों से भरा ग्रामीण समाज उन्हें तनिक भी नहीं रुचता था । फिर साहित्य-साधना किससे हो ? गाँव और जमींदारी के झमेलों से जब उनका मन उकता उठता तो “हमसे जाने कौन अपराध बन पड़ा

है कि बाबा विश्वनाथ ने अपनी नगरी छुड़ा दी” कहकर मौन हो जाते ; काशी का चित्रपट आँखों के आगे घूम जाता । जब कभी प्रसंग से लंकादहन की चर्चा चलती भी, तो कहते, यहाँ भला कविता कैसे हा, यहाँ के प्रपंच ही रात दिन छुट्टी नहीं देते हैं । कार्यवश काशी आते, एक दो दिन रहकर फिर लौट जाते । एक बार जब वे कई जंजीरों में जकड़ गए तो उन्होंने दो छंद लिखे—

मेरे किए पाप तो सही हैं बही देखौ कहा,
 बिनती यहै है जौ सुनौ तौ सुनि कान दै,
 सुधि कै सुधारौ निगमागम निहारौ,
 कही अपनी बिचारौ न बिसारौ ध्रुव ध्यान दै ।

कोटि जन्म जात अघब्रात समुदात तेरे,
 जान यह जानी बात कहत प्रमान दै,
 मानौ जौ अनघ तो बसावौ निज ओक,
 ना तौ करिकै बिसोक बिस्व ही तैं कटि जान दै ॥१॥
 जन्मन के अर्जित कलाप लखि पापन के,

अमित उतापन के तापन तचाइ लै,
 दै दै कै सजाइ मन मानी जौन चाहैं आप,
 अपनी रजाइ मैं रचाइ परचाइ लै ।

निपट निकाम पै गुलाम बिन दाम को हौं
 यामैं ना कलाम जग जाहिर जँचाइ लै,
 बिनती यहै है सेस मनुज भए पै देव,
 दनुज न होन पाऊँ तौ लगि बचाइ लै ॥ २ ॥

ऐसा लगा कि इन छंदों के अक्षर अक्षर में उनकी वेदना बसी हुई है, और वे भगवान में अपनी शरदास कर रहे हैं। लोगों के बहुत आग्रह करने पर किसी प्रकार उन्होंने लंकादहन को पूरा करने में हाथ लगाया और जैसे जैसे समय मिला क्रमशः लिखते गए और नौ सगों में ग्रंथ पूरा हुआ। रचना पूरी होने पर एक दिन उन्होंने सभा में कुछ अंश सुनाने की कृपा की। ब्रजभाषा एक तो वैसे ही बड़ी श्रुति-मधुर होती है, तिसपर ईश जी के पढ़ने का ढंग इतना मनोहर था कि लगभग तीन घंटे तक कविता-पाठ होता रहा। श्रोताओं को पता भी न चला कि कब तीन घंटे बीत चुके। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण जी गुप्त, जो उन दिनों सभा के सभापति थे, उक्त अवसर पर अध्यक्ष थे। सब के सब कथा-प्रवाह में तन्मय थे। तभी ईश जी ने उनका ध्यान भंग किया—“भाई अब बस करऽ, अउर फिर कब्यौं सुनाय देब।” तब जाकर लोग प्रकृतिस्थ हुए।

इसे चाहे भगवान की कृपा कहिए या मायामयी की महिमा, उनका “फिर कब्यौं” न होना था न हुआ। थोड़े दिन बाद ईश जी बीमार पड़ गए और रोग का ठीक ठीक निदान भी तब ही पाया जब वे कालग्रास के निकट पहुँच चुके थे। डाक्टरों ने बताया, इन्हें कैंसर हो गया है। उसी की चिकित्सा के लिये वे पटने गए पर वहाँ भी कोई ठीक उपचार न हो सका, और काशो लौट आए। उनकी बीमारी के दिनों में ही लंकादहन का छुपना आरंभ हो गया था और धीरे धीरे एक फर्मा छुपा भी, पर प्रेस और तांत्रिकों की माया के कारण वे इसे प्रकाशित न देख सके। उनके न रहने

से काशी की उस काव्यधारा का एक अंतिम दीप भी बुझ गया जिसका निर्माण भारतेन्दुजी, सेवकजी, बाबा दीनदयाल गिरि आदि के हाथों हुआ था ।

ईश जी की कविता कैसी होती थी, इसके बारे में तो कुछ विशेष कहने की आवश्यकता नहीं है । उनकी यह समूची कृति ही पाठकों के सामने है । अतएव वे स्वयं इसे भली भाँति जान समझ सकेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है ।

मेष सक्रांति, संवत् २००७ वि० ।

(राय) कृष्णदास

श्री रामचंद्राय नमः

ग्रंथकार की कामना

ईश के लिए की चाहना है या गुनीजन सों,
याके गुन दोष को बिचार कै निरखिहैं,
भाषा, भाव, भूषण, विभेद, रस भेद आदि
गति की प्रगति के प्रसार को परखिहैं ।
पैहैं कछु मोद तौ सुमोद सह सेवक पै,
संचित सनेह बारि बुंद को बरखिहैं,
अल्प मत वारन गवॉरन सों बार बार,
एतो अनुरोध है विरोध मत रखिहैं ॥ १ ॥

ग्रंथ परिचय

बिरह बियोग योग आकुल सिया के हिया,
बेधक अँदेस औ सँदेस को बहन है,
अद्भुत अकूत बूतवारे कपि केहरी के,
कूतवारे कीरति कलाप को कहन है ।
सहन सुबोधन को, गहन अबोधन को,
बिहद बिबोधन के डाह को डहन है,
संकित हिये तैं करि अंकित धरत 'ईश'
अंक मैं तिहारे यह लंक को दहन है ॥ २ ॥

ग्रंथकार का परिचय

विप्रबंसजात अवदात कृतिवारो कुल,
भारद्वाज गोत्र त्रय प्रवर ललाम है,

“पारवती” माता, पिता पायो “सिवमंगल” सों,
 लच्छिमीनरायन जनायो निजनाम है ।
 आनंद के बन को बसैया कई पीढ़िन को,
 “रसमय सिद्ध” को सुशिष्य सरनाम है,
 “ईश” उपनाम राखै कविता कलाम बीच,
 सीतापति राम को गुलाम बिनु दाम है ॥ ३ ॥

कृति का स्थायित्व

काकी रही साहिबी मुसाहिबी सदा ही बनी,
 आखर गदा ही बनि का न असमा गए,
 राम के समै के, बलराम के समै के किते,
 काम के समै के, बीति केतिक समा गए ।
 बालि से बली से दसकंध प्रबली से विश्व-
 बिजई न कौन जो न निजई समा गए,
 काल कसमा गए, बिसेष रसमा गए,
 पै वेई बचे शेष जे अशेष जस मा गए ॥ ४ ॥

निवेदन

जन्मन के अर्जित कलाप लखि पापन के,
 अमित उतापन के तापन तचाइ लै,
 दै दै कै सजाइ मनमानी जौन चाहैं आप,
 अपनी रजाइ मै रचाइ परचाइ लै ।
 निपट निकाम पै गुलाम बिनु दाम को हौं,
 यामैं ना कलाम जग जाहिर जँचाइ लै ,

बिनती यहै है शेष मनुज भए पै देव,

दनुज न होन पाऊँ तौ लगि बचाइ लै ॥ ५ ॥

मेरे किये पाप तो सही हैं बही देखौ कहा,

बिनती यहै है जौ सुनौ तौ सुनि कान है,
सुधि कै सुधारौ निगमागम निहारौ कही

अपनी बिचारौ ना बिसारौ ध्रुव ध्यान है,
कोटि जन्म जात अघत्रात समुहात तेरे,

जान यह जानी बात कहत प्रमान है,
मानौ जौ अनघ तौ बसावौ निज ओक, ना तौ,

करि कै बिसोक बिस्व ही तैं कढ़ि जान है ॥ ६ ॥

छूट्यो धन धाम औ अराम बिसराम छूट्यो,

छूट्यो कुल काम विधि वाम के बिछोहे तैं,
छूट्यो आन सान मान ध्यान ध्रुव धंधन तैं,

छूट्यो नेह बंधन सनेह सुख सोहे तैं ।

छूट्यो खयाल खाम जो मुदाम मन मोह्यो करै,

छूट्यो जाम जाम दाम दाम कौ सनोहे तैं,
तौऊ नहिं छूट्यो अभिग्रंतर बिसास तेरो,

त्यागि सब पायो एक तोहिं मन मोहे तैं ॥ ७ ॥

आस रखि तेरियै बिसास यह जी मैं कियो,

बखत परे पै तू सहाय आय करिहै,
और बहु देवन तैं भेव कछु राख्यो नाँहि,

टेव भरि भाख्यो नाँहि तिनसों अंकरिहै ।

जो तू यहि औसर उदासता गहत तौ तौ,
 जानि राखु मेरो माथ नाथ जौ उघरिहै,
 ढोंग बाँधि गखी जग जौन दीनबधुता की,
 ता मैं तो गरूर ते जरूर बीच परिहैं ॥ ८ ॥

आत्म-संबोधन

देह के भरोमे सत्य मन्तत सनेह भूलि,
 फूलि उल्यो नेह कै धरा तैं धन दारा तैं,
 धायो धाम धाम काम करत निकाम, कटि
 काम कोह कलित कलेवर की कारा तैं ।
 पायो ठीक ठाम ना अराम हेतु ए रे मन
 राम हो तू चंचल भयो है कहा पारा तैं,
 खोवत जमा को जाम, जोहत जरा को चाम,
 रोवत हराम ता पै निपट नकारा तैं ॥ ९ ॥

पश्चात्ताप

है कै हराम के काम के धाम के दाम के दास बने न पिछान्या
 मोह महोदधि मैं भ्रमै मीन ज्यों बासना लीन समाज मैं सान्यो ।
 नैकु कियो न कर्वौ कोउ को हित “ईश” प्रपंचन ही मैं भुलान्यो,,
 हाय गुलाम है वाम के चाम के हाय न राम को मैं उर आन्यो ॥ १० ॥

श्री रघुपति पद पदुम प्रति, करि बहु बार प्रनाम ।
 बुधजन सों मांगत बिदा, “ईश” पूरि मन काम ॥ ११ ॥

श्रीरामचंद्रायनमः

लंका-दहन मंगलाचरण

—०—

सिद्धि-वरदायक, सहायक सुदीनन को,
चारुचित्त चायक, सुनायक गनाली को ।
ठानि गुन-गौरव, अनादि सुर-रूप मानि,
जानि करवैया हानि बिघन-घनाली को ।
नत है बिनै सों, भक्ति-भाव भरि भावुक है,
राखि उर कंपन परंपरा प्रनाली को ।
करत प्रनाम “ईश” बाम गिरिजा के गोद,
सुंडकुंडलीकृत कुमार सुंडसाली को । १ ।

हौंस भरो हालि हालि मुंड लघु ऊरध कै,
 मुंड पै षडानन के चँवर दुराए देत ।
 पलटि गिरीस गल आस्रित भुअंगम को,
 फन को लपेटि फूतकारन फुराए देत ।
 फेरि अंबिका के कंध ही पै कर टेकि,
 तुंड मेलि पयमंडल को छीर ही उराए देत ।
 सोई बाल-क्रीड़ा को बिनोद गिरिजा के गोद,
 “ईश” को सुमोद, चहुँकोद सों पुराए देत । २ ।

नाकी जाइ देत हैं उराहनो पिनाकी पास,
 रावरो दुलारो तौ हमारो भयौ अरि है ।
 मानत न संक, अंक भानत लिखे जे बंक,
 रंक को बनावै राउ, राखै सरवरि है ।
 बिघन बिचारे कित जाहिं बिरचे जे हम,
 आपी कहौ कैसे कै निषेध बिधि सरि है ।
 एक दंत ही तैं किए डारत दुरंत अंत,
 ह्वैहै जुगदंत तौ न जानै कहा करि है । ३ ।

सुमिरत सारदा हुलसि उठि आइ, धाइ,
 उमगि उछगि छकि छोहतै रहति है ।
 पुलकि, पसीजि, अतुराइ अंक लाइ “ईश”
 बार बार बदन बिमोहतै रहति है ।
 जद्यपि अडैतो पै लडैतो निज लाल मानि,
 जानि कै हठीलो टकटोहतै रहति है ।
 नैसुक न होन पावै कैसुक मलीन मुख,
 याही तै सदैव रुख जोहतै रहति है । ४ ।

विधि तौ विधान ही के विधि मै बनेई रहै,
तिनको न नेक अवकास इकहू घरी ।
तोष मानि परमा रमा के पग चापन सों,
पौढ़े सेस-सैय्या पै बिनिद्रित गदाधरी ।
त्रिभुवन सूल को निमूल करि सूली आप,
बैठे ध्यानमग्न जाया जोहति खरो खरी ।
होती जौ न तू ही अवलंब अंब जागरूक,
सारी सृष्टि धाता की बिमूक रहती परो । ५ ।

एरी ब्रह्मवादिनि, त्रिरंचि-हृदि-ह्लादिनि,
असेस-कंठ-नादिनि, बिसेस प्रतिभा दे तू ।
जन-मन-मानस उदोति ज्ञान-ज्योति अंब,
अंतर मै निरत निरंतर जगा दे तू ।
जासों परै सूक्ति गुप्त-प्रगट सु-उक्ति-युक्ति,
भाव-भक्ति-भूषित रसीली मति मा दे तू ।
चाहौं कह्यो रामदूत-कीरति-कथा को
यथातथ्य तौन सुमति समोद उपजा दे तू । ६ ।

तौलौं जगदीस की अनूठी अनपाया,आदि,
माया सृष्टि जाया को सिंगार सजती नहीं ।
तौलौं अनुराग की अमंद अरुनाभा “ईश”
जीवन के जिय मै उमंग अंजती नहीं ।
तौलौं कवि-कुल की कवित्व-बल्लकी पै
व्यंग,ध्वनि औ बिभावना बिहाग बजती नहीं ।
जौलौं तव चरन-सरोज-रज-रासि-बीच,
मोहमयी सुमति मजेजि मजती नहीं । ७ ।

एहो पिंगलोचन, त्रिलोचन सुभावतार,
 रोचन चखन चारु लखन-रमैया के ।
 सब दिन ही तैं, दुखमोचन हमारे तुम,
 पोच न कहत, हौ उपाय निरुपैया के ।
 गरज भरो हौं, करौं अरज, सुनौ, औ गुनौ,
 कासों कहूँ आपही सहाय असहैया के ।
 चाहत हौं रावरी सुकीरति कथा को कह्यो,
 दीजियै कहाइ, रुचिरूप है रजैया के । ८।

कल्पलता की सर्व संपति, सुमति सुद्ध,
 भव्य-भाव, भूरि भूति, भक्ति के भरन हैं ।
 ऊखन-मयूखन तैं, मधु तैं, सुधा तैं मंजु,
 मंगल-करन बाधा-बंधन-हरन हैं ।
 “ईश” ऋद्धि-सिद्धि-नवनिद्धि-बुद्धि-दाता वर-
 विजय विसाहि धर्म-ध्वज के धरन हैं ।
 अंबुज-वरन, अस्तरन के सरन, दुख-
 दारिद-दरन राम रावरे चरन हैं । ९ ।

“ईश”हिं ध्याइ, कपीस की पाइ,
 रजायस आयस अंतर ही की ।
 चाहत कीस-कथा लिखिबो, गहिकै
 प्रथा आदिकवीस कही की ।
 काव्य-कवित्त बनाइ जथाबिधि,
 राखत मर्मिन के हित ही की ।
 प्रेम-प्रसाद-समेत है यापर,
 सेष के सेष की रेख सही की । १०।

चहन चाहि चित की चपल, पल पल बिछुरत मानि ।
 कहन चाहत “लंकादहन”, महन मोह अनुमानि । ११।

प्रथम सर्ग

अग्न्याविर्भाव

सीतहिं नवाइ सीस, ध्याइ जगदोसै “ईश”,
प्रबिस्यो असोकवन-अंतर मरुतजात ।
देखे तहाँ फूले-फरे पादप-समूह केते,
नाना रंग रंग के मनोहर मृदुल पात ।
हेरत प्रहृष्ट चित्त, कौतुकी कपींद्र कूदि,
चढ़ि तरुवर पै लस्यो यों छवि दरसात ।
कछु मुख मेलै, कछु महि पै सकेलै, कछु
नभ-दिसि झेलै, खेल खेलै फल खात खात । १२।

खातै खात तरु पै बिचारयो कपि कायमान,
अर्थ रह्यो जौन तौन पूर्यो रघुराज को ।
बाकी रह्यो एक, निज पर के बलाबल को
जाँचिबो, सँवाचिबो अरीन रन साज को ।
याके हेतु उर मै उपाय सदभासै नाहिं,
सुमति बिकासै नाहिं अपर सुब्बाज को ।
ताते छोड़ि तीनौ पथ, साम, दाम, भेदन को,
चौथो रुचै जुद्ध ही प्रपूरक स्वकाज को । १३।

सोऊ किमि सिद्ध होय, प्रभु-जस-वृद्धि होय,
हमहू समृद्ध होय, मथि बल दर्पी को ।
पाऊँ अनायास ही, प्रवेस पुरअंतर,
तदंतर दरस दस मौलि मौलिअर्पी को ।
याको अवकलत उपाय एक मोको भल,
भंजौ प्रमदावन परम प्रिय तर्पी को ।
ताकी पाइ खबरि, पठैहै सो भटन भूरि,
हौँहूँ दरि दैहौँ तिन समन समर्पी को । १४।

सो सुनि हठात, दसकंधर हठैहै औ,
 पठैहै भट भूरि, ते निठैहैं जब आइकै,
 तब निज बिक्रम दिठाइ तिन दुष्टन को,
 ऐसी गाँठि कठिन गठैहौं अरुभाइ कै,
 जाके सुरभाइवे को, उमठि नठैहै आप,
 ठाइहै उपाय कोऊ जासों पैठ पाइकै।
 हौं हूँ बनि राघव बसीठि निज दीठिन सों
 ढीठ शठनाथहिं दिठैहौं पास जाइ कै।१५॥

याही हेर-फेर मै अहेर करि दुष्टन को,
 ऐसो निज बिक्रम प्रचंड चंड करिहौं।
 जाहिजोहि मानिन को मान मिटि जैहै, आन
 सान सटि जैहै जब सामुहें संभरिहौं।
 रैहै नहीं धीरज धुरीन धनुधारिन के,
 बक्र है सुचक्र के समान जब चरिहौं।
 असिहै त्रिलोक, सोक बसिहै असुर ओक,
 जब हौं अलोक जवमान है उछरिहौं।१६॥

करि क्रम निश्चित स्वकर्म साधिबे को इमि,
 आइ छिति तल पै बढ़ाइ बल बे प्रमान,
 लाग्यो गहि गहि कै उखारन बिटप-ब्यूह,
 रहि रहि वारन पवारन दसो दिसान।
 जैसे महोमारुत, मरोर, जोर-सोर करि,
 छन मै अरंड-बन डारै करि नासमान,
 तैसे निज परिथ-भुजान के प्रहारन सों,
 कीन्ह्यो कपि सत्वर असोकबन सोकमान।१७॥

नंदन सों नंदन असोक तरु-बृंदन को,
 कीन्ह्यो बायुनंदन निकंदन अकद कै ।
 दीन्ह्यो भरि भग्न द्रुम-लतन-समूहन तैं,
 गिरिवर-द्वहन तैं पूहन बिहद कै ।
 द्रुत तरुन-स्वन-नादन, बिहंगन के
 करुण निनादन तैं आकुल अरद कै ।
 कपि बरजोरन बिराज्यो जाइ तोरन पै,
 चन्मद समान प्रमदावन अमद कै । १८।

बरजन लागे रहे जौन रखवारे तहाँ,
 तरजन लागे कपि-गर्जन परत कान ।
 कछु समुहाने, रहे जौन मरदाने बीर,
 कछु उमगाने, करिबे को जुद्ध जातुधान ।
 कछुक उपक्रमी उपक्रम करन लागे,
 बिक्रम प्रकासिबे को देखि द्रुत हनुमान ।
 कूदि किलकारयो, कछू परतै सँहारयो, कछू
 मीजि महि मारयो कछू भागे भीरु भीतिमान । १९।

शेष रखवारे रहे जौन अधमारे तौन,
 जाइकै पुकारे दसआनन-दुआरे पै ।
 'नाथ एक मर्कट विशाल कालरूप आयो,
 अति बिकराल नैकु मानत न वारे पै ।
 आपु है असोक, पै अशोकवन शोक पारयो,
 बिपिन उजार्यो रजनीचर सँहारे, पै—
 तबहूँ गयो ना, दूरि अबहूँ भयो ना, बसि
 दनुज-दरौना ललकारत अगारे पै । २०।

सुनि सब हाल दसभाल के बिसाल दृग,
 लाल भए द्रोह-कोह-मोह-मद-माते से ।
 उबलत कोए रोस-रस मै समोए, जात
 जोए नहिँ अँसुवा अगोए कढ़ि ताते से ।
 कन कन ह्वैकै दुरे परत कपोलन पै,
 ताकी कवि उपमा बखानै उर आते से ।
 बरत दिया तैं चुए परत जमी पै जिमि,
 चिनगी समेत नेह-बिंदु अधिकाते से । २१।

बोझि निज-किंकर-चमू को, दै निदेस भेज्यो,
 रहस-भरे ते, असी सहस लड़ैया बीर ।
 धाए भरि साहस, प्रवाह सरिता लौं फैलि,
 आए कपि संमुख असोक अटवी के तीर ।
 देखि दूर ही ते हनुमंत हाँक दैकै डाँकि,
 एकही उलाँक मै महो पै आइ रनधोर,
 लाग्यो दौरि दारन, बिदारन, संहारन, औ
 मीजि मीजि मारन, चिथारन सुचीरि चीर । २२।

लागी बहु बेर ना अहेर खेलिबे मै, घेरि-
 घेरि कपि मारथो निसिचारन-जमाती को ।
 बाकी बचे एकु ना, अनेक देखु हारे, जाइ
 खबरि जनायो दसकंधर से अराती को ।
 सो सुनि महान बलशाली जंबुमाली टेरि
 निज कुलपाली जानि भेज्यो सुरघाती को ।
 सोऊ भागसाली, लिए संग कटकाली, पास
 जाइ कपि ख्यालो भयो दीपक प्रभाती को । २३।

योंहीं मंत्रि सत्तम प्रहस्त के सपूत सात,
 और भट पाँच जे जितैया अरि-सेना के ।
 भेजे गए क्रम से कपीस से महाजन पै,
 बार बार धारित रकम-रूप देना के ।
 ते वै जाइ जाइ, अरिवर के सकास,
 अवकासहू न पायो भए भेषज सुखेना के ।
 पंचक पथो से ते बिपंचक रथी हैं बने,
 अरथो अँकौर कालकौर से चबेना के । २४।

पाय मयदान मै न एको जातुधान जीव,
 सुचित अतीव हैं कपींद्र केसरी किसोर ।
 कूदि चढ़ि तोरन बिराज्यो छबि छाज्यो इमि,
 राजै जिमि मेरु पै प्रभासमान भानु भोर ।
 कंध करि उन्नत, प्रबंध भुजबंध टेकि,
 चपल चितौनि चाहि चाहत सु चारो ओर ।
 मानो तोष-रहित, बिसालकाय काल आप
 रोषजुत हेरत निसाचर-पुरी की ओर । २५।

देखि परिनाम अनइच्छित स्वपच्छिन को,
 प्रबल बिपच्छिहिं सु लच्छि रच्छसाधिपति ।
 बोलि दच्छ द्वंदी, अच्छ कुँवर बुभाइ बेस,
 बोल्यो बच्छ बनिकै सुरच्छी बाहिनी को पति ।
 गच्छ द्रुत समर समच्छ, परधच्छी बीर,
 अच्छी तौर पौरुष प्रगटि परपच्छी प्रति ।
 दुवन अलच्छी को प्रतच्छ मम ल्याउ कै तो,
 मृतक दिखाउ देह ताको दै सुअंत गति । २६।

सुनि निज नायक निदेस, दनुजेस-जात,
 अप्रमेय अजित अतुल्य बलसाली बीर ।
 उग्र तप तापी, अच्छकुँवर प्रतापी, अंसु
 मान के समान मूर्तिमान तेजधारी बीर ।
 हेमजाल-निर्मित सुवर्म-सी सत्रान पैन्हि,
 बहि-सम उग्र असि कसिकै कमर तीर ।
 माँग्यो सारथी सों रथ दिव्य जौन पायो करि
 तीव्र तप अमर अरीन को दिवैया पीर । १२७

दूत-मुख पाइकै रजाइ असुराधिप को,
 सूत ल्यायो स्यंदन सजाइ द्वार कच्छै है ।
 जाको शूल मुद्गर परशु पाश दंड गहि,
 असुर निकाय निज काय समरच्छै है ।
 किन्नर उरग यक्ष अमर असुरहूँ तैं,
 संतत अजेय अनिवारित अधच्छै है ।
 किंकिनी मधुर रव रंजित पिसंग रंग,
 आयो रथ दिव्य तौन अच्छ के समच्छै है । १२८

अय मय पतर मढ़यो है चढ़यो जापै और
 सालिस समान बान खालिस कनक को ।
 पावक प्रमान तेजमान जवमान जोते
 आठ बर बाजि जो न थिरते छनक को ।
 आठ असि, तून, धनु, तोमर परसु सक्ति,
 संजुत जथाक्रम, बिमोहक बनक को ।
 ल्यायोरथ सोदरी, बृकोदरी ध्वजा सों सज्यो,
 निर्मित कृसोदरी, मदोदरी-जनक को । १२९

आयो हेखि स्यंदन, मनाइ इष्ट देवै, नाइ
सीस पितु-पद पै, असीस पाइ जय की ।
आनद अमायो, मान मद मै मजायो मन,
सान मै सजायो गति, मति के निलय की ।
तायो तन तेह तैं, सनेह बिसरायो सबै,
आयो कढ़ि गेह तैं, भुलाइ भीति भय की ।
बैठि द्रुत रथ पै, अकथ द्युतिधारी धीर,
धायो रन-पथ पै, बँधायो छोर छय की ।३०।

हैकै कर्णधार यों अपार सुभटावली को,
बेड़ा बाँधि, डाँड़ा-शर धनु-पतवारी लै,
स्वबल अतूल मसतूल सों सुधारि, धारि
धीर इरषा को गुन, लाग-लगुहारी लै,
साहस-सुपाल पै उताल रनसागर को
संतरन चाहत स्वकाल की बयारी लै ।
त्यागि पितु-तीर सो समीरसुत-बेला ओर,
उमगि अकेला चल्यो आपु अगुआरी लै ।३१।

धायो एहि तौर सों, अरातिपति-पच्छो अच्छ,
बाजि-भाज-रथ-रव-पूरत दिसान को ।
आयो चलि सत्वर, समीप प्रमदावन,
हरी प मद दावन को, हनत निसान को ।
देख्यो दूर ही तैं तोरनस्थ, बन-छोरन पै
ज्वलत फुलिंग मानो प्रलय कृसान कां ।
हेरि हिय हार्यो, तऊ धनुष सँभार्यो, ताकि
तीनि सर मारयो ललकारयो रच्छसान को ।३२।

लागे सर सीस सद्य स्रोनित स्रवत सोधि,
 ऐसे भए बंक दृग कपि बलसाली के ।
 जैसे परभात मंडलस्थित नवोदिताभ,
 राजें सर अंसुमान वृत्त अंसुमाली के ।
 उग्र बानरर्षभ, अमर्षी रोष पायो अति,
 हेरि उत्कर्ष इमि कौणप कुचाली के ।
 चाह्यो एहि भाँति सो अनैसे सत्रुसाली प्रति,
 चाहै ज्यों बुभुक्षी बैनतेय दिसि व्याली के ।३३।

कूद्यौ किलकारि कै, उखारि तरु लीन्ह्यो एक,
 धायो कपि संमुख कुमार रनदच्छी के ।
 देखि क्रुद्ध कीसहिं कृतांत सम आवत यों,
 आयो रोष उमगि नितांत सुरधच्छी के ।
 तानि धनु त्याग्यो, लच्छ लच्छ बान बैरी लच्छि,
 धाए ते सपच्छ बिषधर से सुलच्छी के ।
 जाइ अध ऊरध, भ्रमाइ द्रुम दानवारि,
 कीन्ह्यो शरजाल व्यर्थ, अच्छ से बिपच्छी के ।३४।

चक्र सम चरिकै सु सक्रजीत बंधु सौहैं,
 करिकै उचौहैं बक्र वृत्त बज्र पानी सों ।
 धायो आइ तुरंग-समेत रथ-सारथी को,
 एक बार ही मै बधि डारयो छिति घानी सों ।
 कूदिकै ततच्छन समच्छ कपि आयो अच्छ,
 पैदल है स्वदल सँभारि बलखानी सों ।
 कसि कटिबंध, धनु कंध पै चढ़ाइ ऐंचि,
 खैंधि असि चाह्यो जूटि जूझन कृपानी सों ।३५।

खैंचि चंद्रहाँस चंद्रहासै उपहासि, गाँसि,
 आयो रामदास के सकास अच्छ अरिकै ।
 देखि पैतरे पै धूमि, मूमि कै तरे पै ताहि,
 पकरथो अकास-पथ मारुति उछरिकै ।
 सोऊ उड़थो संगै, चाहि अरि-गति भंगै,
 निज मद के उमंगै गगनापरि सँभरिकै ।
 दोऊ भयो भासमान ऐसे उपमा समान,
 जैसे जुग भासमान भासैं भानु थिरिकै ।३६।

घात हेरि औचक, अचूक वार कीन्ह्यो अच्छ,
 दच्छ कपि दीन्ह्यो ताहि खाली छूटि छल कै ।
 आइ भट पीठ पै सुढीठ बलवारो चंड,
 दीरघ उदंड दोर दंडन चपल कै ।
 लीन्ह्यो भरि भुजन ससख भुज दोऊ तासु,
 आसु हिय हारथो सो अराति कलबल कै ।
 जैसे बाज पंजे फँसे आरत बटेर तैसे,
 कपि के सिकंजे कसे डारत बिकल कै ।३७।

मसकत पंजर, करेजे कसकत चोट,
 खोट ह्वैगो असुर जमाति मै अराती को ।
 आयो कंठ प्रान, अकुलायो जातुधान, लाग्यो
 दंतन सों काटन भुजान कपि घाती को ।
 तौलौ ताहि पटकि मही पै तहीं मारथो मर्दि,
 बच्छस बिदार्यो प्रेलि पंजन प्रपाती को ।
 हाहाकार माच्यो उतरच्छस-चमू मै, इत
 जयघुति नाच्यो नभ अमर जमाती को ।३८।

देखि निज-नायक-निपात दनुजात-दल,
 धाए बातजात पै सुसज्जि बिज्जुधारा सों ।
 सावन-घटा लौं बरसावन लगे ते घेरि
 भरभर बुंदवान तुंद बारिधारा सों ।
 हँकै इषु-बिद्ध कपिराज इमि सोह्यो तहाँ,
 सोहै ज्यों प्रसिद्ध सैलराज सरधारा सों ।
 घूरत कृतांत सों नितांत तिन तुच्छन को,
 धायो परिपूरत दिसांत धूरिधारा सों । ३९।

धाए गहि आयुध, नखायुध विविधि विधि,
 बदि बदि आपुस मै बेहद बदो चली ।
 लागे गिरै छीजि छीजि अर्दित अराति दल,
 बीच बेसुमार सरदार-गरदी चली ।
 शेष कीन्ह्यो सत्वर गजास्व-रथ-सादी सबै,
 पाँति मै पयादिन के पावकपदी चली ।
 संकुल सँहारे तिन मृतक पहारन ते,
 चहुँ दिसि स्रोनिन की निकरि नदी चली । ४०।

घोड़न सों घोड़े, रथ रथ सों लड़ाइ मारे,
 हाथिन सों हाथी को भिड़ाइ कै सँहारे देत ।
 दौरि दौरि दारुन दनुज पदचारिन को
 चरि चरि कचरि कचूमरि निकारे देत ।
 मुष्टिकन, लातन, लँगूरन लपेटि, फेदि
 डारत पिठी लौं, सिठी महि पै बितारे देत ।
 दारे देत दाँतन, अदाँतन द्वारे देत,
 अँकरि अरातिन को पकरि पछारे देत । ४१।

दौरि दौरि दूरि तैं दबेरि दनुजातिन को,
 दारुन दबागिलौ दिसा मै डाँटि डाँटि जात।
 गहि पद सपदि अनेकन भ्रमाइ ब्यस,
 पथमै उछारै औ पिछारै छाँटि छाँटि जात।
 ते वै अंतरिच्छ मै अचेतन भ्रमत, अध
 ऊरध लौं आइ कै गुड़ी लौं आँटि आँटि जात।
 बोलि बकरी लौं, नभ घूमि चकरी लौं, गिरि
 भूमि लकरी लौं, ककरी लौं फाटि फाटि जात। ४२।

मेदमई मेदिनी गई है ठौर ठौर तहाँ,
 लोथन पै लोथ के पलोथ पटि पटि गे।
 ठौर ठौर पल के पिलूदा परे गूदा सम,
 खाइ खाइ जंबुक असूदा है उलटि गे।
 फाटे अध-फाटे परे, सिर-भुज काटे परे,
 ठाटे परे केतिक कुठाटे आइ अँटि गे।
 केतिक धरे जे, रन-रस लै लरे जे,
 कढ़ि तिनके करेजे धूरि-धारा में सिमटि गे। ४३।

गाड़े भरे रुधिर, अगाड़े है तगाड़े भरे,
 नारे भरे सिमिटि पनारे भरे नद भे।
 गज-दल मारे परे उभय करारे भए,
 ध्वज तटवारे तरुवर से बिहद भे।
 ढाल भए कच्छप, सुमच्छ करवाल भए,
 बार भे सेवार सीप संबुक सुरद भे।
 माभी गीध, काक-कंक केबट सुसाभी भए,
 कौणप कुणप कुल बोहित बलद भे। ४४।

घायल के परत उतायल परत गीध,
 हायल से होत सीध साधि कै सरब है ।
 काक-कंक संक तजि नोचि नोचि चोंचन ते,
 काढ़त करेजा खात गहिकै गरब है ।
 जोगिनी जमाति जुरि आई मुद माति माति,
 पीवति रुधिर पूरि खोपरी खरब है ।
 मालिका सजाव मुंडमाली लै कपाल कर,
 कालिका बजावै मानि मारुती परब है । ४५।

ऐसी उग्र लरनि, चपेटनि, चरनि, चाहि
 कपि की, नभस्थित सुरेंद्र सुर सिगरे ।
 आपुस मै कहत अचंभित भए से सबै,
 ऐसो सौर्य बिक्रम बिलोके नाहिं दिगरे;
 यह तौ त्रिलोक सों अजेय अनिवारित है,
 काल सों कराल एहि काल भयो बिगरे ।
 एते बड़े दल को अकेल बधि डारे भूमि,
 धन्य याको जीवट, सु धन्य याके जिगरे । ४६।

दानवन दारिकै प्रचारि दसकंधरहिं,
 बोल्यो किलकारि बज्रनादै करि बर्धमान ।
 मै हौं महाबाहु कौसलेंद्र रामचंद्रजू को
 दूत पौनपूत नाम मेरो कपि हनुमान ।
 मेरे सासिबे को इन तुच्छन पठावै कहा,
 आवै उठि आप क्यों न ह्वै बलवीर्यमान ।
 देखै आइ चंडता उदंड दोरदंडन की,
 खंडौं भुजदंड बीस ताके तृन-तुच्छ मान । ४७।

बात के बात मैं बात को जात निपात कियो यों अरातिन को दल ।
 सेस बचे न कहूँ अबसेसी, निसाचरबेसी दिसा मैं दुरे खल ॥
 दूनो कै आपनी धाक निसाँक मैं, सूनो कै संकित सारो रनस्थल ।
 जाय बस्यो फिर तोरन-छोरन जोहत पंथ कुपंथिन को भल ।४८।

इति श्रीलंकादहन काव्ये अग्न्याविर्भावनामकः प्रथमः सर्गः

—

द्वितीय सर्ग

अग्न्यानयन

रामदूत मारुत-सपूत पूत हाथन तैं,
रन-मख-हूत सुनि अच्छ से अमर्षी को ।
अरिगो अतंक लंक-बासिन हिए मैं, संक
भरिगो जिए मैं दसकंध के प्रधर्षी को ।
करिगो निवास सोक उर मैं मदोदरी के,
गरिगो गुमान, आन, सान, उत्कर्षी को ।
हरिगो प्रभाव दृढ़ धनुष प्रकर्षिन को,
परिगो अभाव आज पुर मैं प्रहर्षी को । १ ।

काहू बिधि धीर धरि, मति-गति थीर करि,
दसमुख बीरता के आन मैं अमान्यो फिर ।
सोकित हिए मैं प्रतिहिंसा की प्रवृत्ति भरि,
अरि-करनी को चेति मद मैं न मान्यो फिर ।
ध्यान कै महद्वल-समन्वित कर्षिदै, जिय
जानि निज निदै सोक-सिंधु मैं समान्यो फिर ।
सोधि नृप-नीतै, सुत-बल के प्रतीतै, जुव-
राज इंद्रजीतै भेजिबोई उर आन्यो फिर । २ ।

छोड़िकै बिषादै, पास बोलि घननादै, राखि
पितु-मरजादै, गहि अंक लपटाइ कै,
सूँधि माथ, हाथ सों परसि अंग ताके दृढ़,
प्रेम सों पुलकि अति आदर दिखाइकै ।
बोल्यो, 'प्रिय वत्स! दानवेंद्र-कुल-भूषन हौ,
पूषन-स्वरूप तीव्र तेज दरसाइकै ।
सोक-तिमिरावृत उरंतर हमारो, ताहि
करहु प्रभासित निरंतर सुभाइकै । ३ ।

‘धानुष धुरीन धीर धनुष धरैयन मैं,
मैयन मैं अग्रज महान बलदर्पी हौ ।
सस्त्र-गति-विधि के विधाता, दिव्य अस्त्रन के
ज्ञाता, रन-कोविद, अतीव तेज-तर्पी हौ ।
पायो तप-अर्जित बरख ब्रह्म-अस्त्रै तुम,
काय-मन-वचन समस्त पितु-अर्पी हौ ।
विद्याधर, अमर, उरग, नाग, जच्छ आदि,
दिति-कुल सत्रुन को समन-समर्पी हौ । ४ ।

‘जीत्यो सुरलोकहि, वितीत्यो बहुकाल नाहिं,
रीत्यो अरि-ओकहि स्व-धाकन के धसकैं ।
बन्या लौं बढ़ाइ बल धन्या नागकन्या ल्याइ,
जन्या कीर्ति-संजुत विवाह्यो ताहि बस कै ।
जाकी कूर कसक उखाँसन के संग संग,
अजहूँ फनीस के हिए मैं आइ कसकैं ।
तौऊ है बिरोधी करि न सकैं बिरोध कछु,
रहि अवरोधित मनै ही मनै मसकैं । ५ ।

‘ब्रह्म-अस्त्र-संजुत सु तोंको रन मध्य देखि,
सुरन-समेत सुरराज दीठि जोरै ना ।
असुर-निकाय हू सदैव बस तेरे रहि,
तुम्हरे निदेस तौं कबौ हू मुख मोरै ना ।
तप-बल-अर्जित अकूत बल तेरो पूत,
तूतौ कबौं समर सहायक बटोरै ना ।
रिपु-बल बीते बिना धनुष टकोरै नाहिं,
अरि-दल रीते बिना छाव निज छोरै ना । ६ ।

‘विश्व मैं विभात तात तेरो अवदात जस,
 अतिरथ ख्यात तू अजेय गति-ज्ञाता है ।
 संतत समर्थ अर्थ-साधक हमारो तुही,
 बाधक बिरोधिन के बल को बिधाता है ।
 आयो एहि औसर असोकवन-अंतर मैं,
 गब्बर गनीम एक जब्बर जनाता है ।
 जाइ देखु को है स्वत्ववान कपि-रूपी तौन,
 जिष्णु है कि बिष्णु है कि आपुही बिधाता है । ७ ।

‘बिपिन उजारे, बहु रच्छक सँहारे, मारे
 किंकर असी हजार, सात मंत्रि पूतै, पूत ।
 पाँच भट सुभट महोदर समेत तव,
 सोदर अछै को करि डारयो रन-मख-हूत ।
 अति बिकराल है, विसाल काय काल आप,
 आयो कपि-रूप लै प्रबिसि तन पंचभूत ।
 वाके बल-बूत को न कूत करि आवत है,
 निज-मुख बोलै अपने को रामचंद्र-दूत । ८ ।

‘ताते तुम सत्वर सनद्ध सुरथी ह्वै, पथी
 होहु जुद्ध उद्यत बिरुद्ध कपिवर के ।
 ओज सों हनोज फौज-फक्कड़ बिनाहीं बीर,
 संग अंग-रच्छक निसाचर-निकर के ।
 सेना होति लंगर समान परि संगर मैं,
 एक के भगे ते सबै भागत भभरि के ।
 याते रहि निर्भर स्वपौरुष धनुष ही पै,
 जाइयो सतर्क तीर बीर बनचर के । ९ ।

‘बूझि अरि-गति को अरूझि मत जैयो, जाइ
जूझियो तबैही जब जूझिबो सहज होय ।
बल अनुमानि, मानि आयस हमारो, ठान
ठानियो अठान जो न भानिबो सहज होय ।
करियो सम्हारिकै प्रहार इमि अन्न को,
जासों तेहि मारिबो न, पारिबो सहज होय ।
फेरि इमि कीजियो उपाय बस ल्याय ताहि,
जासों मोहिं आँखिन दिखाइबो सहज होय’ । १०।

पाइ पितु-आयस सुआइ गृह इंद्रजीत,
इबिधि बिषाद्यो ज्यों बिषादै बंदि कारा मैं ।
बोली अंगरच्छक अकूत बलवारन को,
बोली, ‘सज्ज होहु, जुद्ध करिबो बिचारा मैं’ ।
फेरि माँग्यो सुरथ महान गथवारो पास,
आपौ लग्यो अँटन उमाह के अँटारा मैं ।
सज्जित सनाह सों सनद्ध धधक्यो सो इमि,
धधकै कृसानु ज्यों पिनद्ध धूम-धारा मैं । ११ ।

चारुकृति चित्रन सों, अद्भुत चरित्रन सों,
मित्रन सों पूजित, महान अभिनेता है ।
उमहि उमाह सों बढ़यो यों बढ़ै जैसे देखि,
पर्व-सर्वरीस को बिछुब्ध अन्धि चेता है ।
चारि नाग जोजित सुसज्ज रथ आयो देखि,
प्रमथ समान मथि पथहिं प्रनेता है ।
आयो पन्नगासन समीप पन्नगासन सों,
धायो सत्रु-सासन को त्रिजग-विजेता है । १२।

लाल लाल ईछन सों, ताकनि तिरीछन सों,
 बीछत मनो वह प्रधान प्रतिदुंदी को ।
 गाहत गहन पथ उर मैं उमाहत सो,
 चाहत चरम चाब भाव कपि कुंदी को ।
 धूरि भर झेलत, उसौंसि रिस रेलत,
 पछेलत पिछैल पौन हू के तीव्र तुंदी को ।
 जात मन ही मन सुधारत गँठीली गाँठ,
 गाँठन को कपि पै सुगाँठवारी कुंदी को । १३ ।

मंद भयो मंद को अमंद बल आपै आप,
 बंद भयो बंद ग्रह-उपग्रह आदी को ।
 नदतन भानु भो विनिंदित कृसानु-तेज,
 तुंदित प्रवेग भो प्रचंड पितुबादी को ।
 क्रंदन करन लागे विकृत बिहंग-बृंद,
 धुंदिन गई है दिसा रूप लै बिषादी को ।
 पिंदित पुहुमि होन लागी धमकनि पाइ,
 धायो जब स्यंदन जकंदि घननादी को । १४ ।

धावत छितिहिं, छार छावत दिगत पूरि,
 चावत सुचाव चित जावत जमाति जोरि ।
 ढावत गजब गाढ़ गब्बर गनीम पर,
 तावत सुतात जस दारुन दिमाक दारि ।
 धावत धरा पै रथारूढ़ जात सौहैं कपि,
 पावत न तोष रोष-रस मैं हिए को बारि ।
 सक्रजीत पहुँच्यो समच्छ अच्छहारक के,
 भासमान भावत भयानक भयो सो भोरि । १५ ।

आए जुरि जच्छ नाग-पन्नग-उरग-सिद्ध-
साधु-समुदाय औ निकाय सुमनस के ।
कौतुक बिलोकिये को सौतुक नभस्थल मैं,
खार मैं खए से भए बिस्मित मनस के ।
चकित खरे ते अरे भय मैं भरे से भूरि,
कंटकित काय है है फल से पनस के ।
इकटक हेरत, न फेरत चखन चाहि,
समर समानवय दोऊ जुवनस के । १६।

ज्यास्वन-सँजुक्त रथ-रव के परत कान,
बीर हनुमान के हिए मैं मोद भरिगो ।
फरकि उठ्यो त्यों बरिबंड भुजदंड चंड,
गंड-मंडलस्थल पै आब सों उभरिगो ।
उच्च करि अच्छन ततच्छन समच्छ देखि,
आयो रुढ़ सत्रु गूढ़ जत्रु हूँ ठहरिगो ।
घन घन साँस लैलै, उसंसि उसांसि लैलै,
आसन उकासि गँसि गाँस मैं सम्हरिगो । १७।

तौ लौ चमकावत बिसेस बिजुरी लौ चाप
चाँपत अधर दीह दाप दहि दावा सों ।
आयो इद्रजीत है अभीत कपि-केहरी के
पास धूरि धारा के घटा तैं कढ़ि कावा सों ।
कोप कै कषायत करेरी करि दीठि नीठि,
दीठत अचैन फेन फैल्यो मुख मावा सों ।
लाग्या बरजोरन टकोरन धनुष, सर
जोरन और छोरन सुलच्छ पर छावा सों । १८।

अरिबर-जोजित सरौघ के घटा मैं अँटि,
 राज्यो कपिराज बद्धमान बपुधारी यों-
 राजै ज्यों अदभ्र अभ्र-अंतर-उदोत भान ।
 तड़ित प्रमान कौंधि कढ़त छटारी यों ।
 गरजि गरजि देत बरजि अवाजन तें,
 तरजि तरजि देत कूदि कै उछारी यों ।
 चरि अध ऊरध पतंग ज्यों छलावा दै दै,
 वारत पतंग कर-निकर ख-चारी यों । १९।

गहि गहि हाथन सों, केतिक सुदाँतन सों
 तोरि तोरि दसहूँ दिसान मैं द्वारे देत ।
 केतिक चपेटनि सों केतिक भपेटन सों,
 लूम के लपेटन सों केतिक पवारे देत ।
 केतिक उड़नि केती गड़न लड़न ही तैं,
 केतिक अड़नि मैं उड़ाइ निरवारे देत ।
 वारे देत केतिक सहेतु किलकारनि सों,
 कपि अरिवारे सर-निकर निवारे देत । २०।

दोऊ तुल्य बीर, दोऊ पौरुष गँभीर धारे,
 दोऊ रन-धीर औ अधीर अमरष से ।
 दोऊ सख-बिधिके बिधाता, अख-ज्ञाता दोऊ,
 त्राता रिपु वार के तयार नोक नष से ।
 दोऊ बेगधारी अरि, अरि के सिकारो दोऊ,
 दृढ़ बलकारी अबिकारी चोष चष से ।
 लागे पर-छिद्र हेरि-हेरिकै प्रहारन औ
 वारन परख अग्रधर्षित करष से । २१।

उज्ज्वल फलकवारे आसुग, अनोखे, चोखे,
स्वर्ण-पुंख-पुंखित असंख्य हनि-हनिकै ।
मारे लच्छ लच्छि ते सपच्छ अहि-सावक से
फुंकरत धाए कपि सौंह फनि-फनिकै ।
अंतर मैं अरिकै निरंतर बचायो दाव,
पायो नहिं घाव ऐकि ताव तनि-तनिकै ।
अर्थवारे संचित अमोघ अस्त्र ताके सबै
कीन्ह्यो व्यर्थ मर्कट समर्थ गनि-गनिकै । २२।

व्यर्थ होत लखिकै अव्यर्थ सर-रासिन को,
सक्रजीत मन मैं अनथ अनुमान्यो फिर ।
अस्थिर हिए को करि सुस्थिर बिचारि ठोक,
कपि है अवध्य दिव्य देही यह मान्यो फिर ।
यापै कस पाइबो स्वबस की न बात तौऊ,
अकस न जात घात हेरत हेरान्यो फिर ।
बंद करि बान-बरखा को करखा मैं भरथो,
द्वंद करिबोई इरखा मैं उर आन्यो फिर । २२।

तौ लौं बज्रनाद सों ननर्दत, अराति-दल
अर्दत-बिमर्दत मही पै महाबेग भरि,
बिहद बिसाल लै उताल तरुताल एक,
हाल फाल फेंकत कराल काल-रूप धरि,
धायो पिंगलोचन समच्छ लाललोचन के,
मोचन अमर्ष अस्त्र रोष मैं रुषायो हरि ।
एक बार ही मैं भंजि डारयो रथ-सारथी को,
मारयो अगरच्छक अरीन इरषा मैं अरि । २४।

दैत्य-कुल-नंदन, अनंदन मदोदरी को,
 देखि भग्न स्यंदन, जकंदि पुहुमी पै आइ,
 मर्दित मृगेंद्र सों अकंदत धरा पै धाय,
 आय कपि संमुख सरोष समुहान्यो जाइ ।
 सत्रु मान कंद को निकंदक मरुतनद,
 नंद्यो अरि आगत निहारि उर उमगाइ ।
 बढ़ि बढ़ि दोऊ भिरे द्वंद करिबे को ऐसे,
 जैसे मेरु-मंदर परस्पर भिरत धाइ । २५।

ठोंकि ठोंकि परिध-प्रमान भुजदंडन को,
 दोऊ चंड विक्रम प्रचंड पड़ने लगे ।
 जोरि कर कर सों उदंड दोरदंडै दंडि,
 मुंडन सों मुंड को उमंडि अड़ने लगे ।
 घुमरि घमंड सों खमंडल समान हैं हैं ,
 बाँधि दृढ़ मंडल मही मैं गड़ने लगे ।
 मंडन अनी के चंडकर के समान दोऊ,
 खंडि रिपु-दंडहि उदंड लड़ने लगे । २६।

ऐंचि ऐंचि, पेंचन पै पेंच बाँधि बाँधि दोऊ,
 दाँवन पै दाँव कै कुदाँव मैं समाने जात ।
 छुटि छुटि, जूटि जूटि, दपटि दपेटि द्रुत,
 लपटि लपेटि कै चपेटि समुहाने जात ।
 भपटि भपेटि कै, भुकाइ भट झोंकनि सों,
 भाड़ दै दै, अरुभि, सरुभि, बिरुभाने जात ।
 जाने जात बिलग न चक्कर करत दोऊ,
 चक्कर समान एक एक मैं अमाने जात । २७।

माथ मिले माथ सों सु हाथ हाथ हाथ मिले,
साथ मिले दुर्धर महान बलधारी दोय ।
सीने मिले सीने सों पसीने सों पसीने मिले,
भीने भीने भरत रुमावलि पनारी होय ।
कीने मिले हृदय यकीने ना अकीने मिले,
चीन्हे मिले धक्कन की धरकनि जारी जोय ।
दीठिन सों दीठि मिले गँठत गठीले दोऊ,
हठत हठीले, पर मानत न हारी कोय । २८।

योंही भिरे तुल्य-बल संगर-करैया दोऊ,
लंगर लगाय एक एकनि पछारी देत ।
तौ लौं एक डारिकै अडंगा तासु तोड़ करि,
झूबि बगली दै नभ-पथ मैं उछारी देत ।
दूजो देखि नेकी तासु, ढेंकी दै गिरायो चहै,
एक भट खैंचि पट निपट निछारी देत ।
दूजो छूटि भू पर तरूपर तरपि आइ,
भरपत एक काट कै कै करछारी देत । २९।

योंही बहु बेर लौं अगेरि प्रतिद्वंदिन को,
दोऊ द्वंदकारी भरे भारी मद-बल ते ।
परत न ढीले जऊ गीले भए अंगन ते,
ढंगन ते लरत सिथीले ना प्रबल ते ।
सकत न जीति एक एकहिं उपाय करि,
काहू बिधि, बिक्रम तैं, छल तैं, न बल ते ।
तब गुनि मन मैं अजीत सक्रजीतै कपि,
कीन्ह्या बज्रमुष्टिक-प्रहार हढ़ बल ते । ३०।

परत पहार सो प्रहार मुष्टिका को सीस,
 खीस कढ़ि आयो इंद्रजीत अभिमानी को ।
 घुमरि गिख्यो सो महि मुरछि पछारा खाइ,
 भूल्यो हास-रोस, रह्यो जास न जवानी को ।
 कछु छन बीते चेत पाइ अकुलाइ उठि,
 सिथिलित इंद्रिन थिराइ दृढ़ आनी को ।
 गहि कै गलानि, अनुमानन हिए मैं लग्यो,
 केहि बिधि जीतौ जंग ठानि कपि मानी को । ३१।

सब दिसि सोचि, मोचि उर के बिकारन को,
 माया-बल जूझिबो अबूझ उर आन्यो सो ।
 सरभ-समान नभ-पथ लै अलभ है कै,
 गरभ-प्रमान तम-गरभ समान्यो सा ।
 मायापति-दूत हू अमाया तासु माया-मध्य,
 आया पास तौलgi अकाया है बिलान्यो सो ।
 छिति मै छपान्यो, किधौं खेह मैं खपान्यो, नीच
 बीच मैं न जान्यो जात कित को हेरान्यो सो । ३२।

देख्यौ जब नाहिं ताहि कपि चख गोचर सों,
 सोच-रत है गयो बिमोचत पलक को ।
 फेख्यो दृग दिसि मैं नदिसि मैं निवेख्यो भले,
 तबहुँ न हेख्यो कहूँ खल के झलक को ।
 तौ लौं अंतरिच्छ सों अचानक निकरि अरि,
 आयो कपि पृष्ठ पै दुरावत दलक को ।
 चाह्यो बढ़ि बाँधन, परत हाथ काँधन पै,
 घूमि गह्या मारुती अबाधन अलक को । ३३।

पकरत केस के बिसेस बिकलान्यो फेरि,
खल मल सान्यो सो बिधान्यो छल-साज-को।
करिकै पखंड चंड कर तैं निबुकि, घोर-
घन-तम खंड मैं लुकान्यो गहि लाज को।
रहि तित रच्छित हिए मैं अनुमान्यो, जान्यो
मर्कट महान है पठायो रघुराज को।
दुर्धर अबद्ध औ अबध्य दिव्य अस्त्र बिन,
हैहै ना निबद्ध औ नसैहै कुल-काज को।३४।

करि इमि निश्चित बिचार, अनुसारता के,
साध्यो बर अस्त्र अनुदार अनबादो नै।
धायो बर-बिद्युत बिभा सों भन्यो अस्त्र वह,
दीपत दिसान देखि ताहि कपिवादी नै।
उर अनुमान्यो ब्रह्म-वचंस प्रयुक्त यह,
अस्त्र है महान, जाहि जानि हठवादी नै--
साधिबे को अर्थ औ अनर्थ अवरधिबे को,
बाँधिबे को कीन्हो है प्रहार प्रतिवादी नै।३५।

जद्यपि पिता के बर बल सों अबध्य हम,
तदपि पितामह के अस्त्र की महत्ता को--
राखिहौँ अवस्य, आइ बस्य मैं निसाचर के,
लखिहौँ सु याही ब्याज रावन की सत्ता को।
इबिधि बिचारिकै बिबेक अनुसासन को,
मानि सर-सासन बिकास की इयत्ता को।
गुरछि गिखो सा उर छत लै अछत अंग,
मुरछि मही पै ढंग छोड़ि बलवत्ता को।३६।

मुरछित देखि उर छिति पै प्लवंगम को,
 जंगम निसाँक आँक हिय मैं गँसायो सो ।
 कढ़ि तम घन सों बिघन सों उकढ़ि नीके,
 बढ़िकै सकात बातजात पास आयो सो ।
 सबिधि निहारि कै, बिचारि बिधि बाँधन को
 बाँध्या नागपास मैं असाध्यो सिधि पायो सो ।
 हरषत हो मैं छार करषत धीमे धीमे,
 लक की गली में जात गबे मैं अमायो सो । ३७ ।

बाँधि मारुती को कारुती सों चल्यो इंद्रजीत,
 जारुती सों मेघ बिज्जु कारा किए जात है ।
 मानत न संक लंकपति के लखैबे काज,
 दुवन दराज को सहारा दिए जात है ।
 जानत न मूढ़ गूढ़ ग्रह को दसा को रूढ़,
 व्यूढ़ बुद्धिवारो मद-धारा पिए जात है ।
 हाहाकार पारिबे को, बगर उजारिबे को,
 जारिबे को नगर अँगारा लिए जात है । ३८ ।

व्यालपास-बद्ध सुनि आवत कपीसै इत-
 तित के अराति-गन कौतुक बिबस से ।
 धाए धाम-काम छाड़ि छोड़ि अतुराए आए
 जुरि पथ बीच अति उत्सुक मनस से ।
 देखि देखि कीसै उर रेखि-रेखि रीसै सबै,
 लागे रद पीसै भए आकुल अकस से ।
 लै लै बररोह कोह करिकै गरुह बाँधि,
 लागे फेरि बाँधन कपीसै करकस से । ३९ ।

निरखि निबंधन प्रबंध मद-अधन को,
 गंधवाह-नंदन स्वकंध संकुचित कै ।
 अर्कबंधु सहस्र बंधायो अंग बधन मैं,
 रंध्र उर पाया यों बिचार समुचित कै ।
 कृत्रिम अजोग उदबंधन लगत गात,
 जात ब्यालबंधन प्रभाव संकुचित कै ।
 सो तो अनुबंधन लगाई इन अंधन नै,
 आपै कियो व्यर्थ अच्छ-बंधुहि दुचित कै । ४०।

जदपि अबध्य बिधि-बर तैं सदैव हम,
 तदपि सुबद्ध होइ देवपति-तापी तैं ।
 आयां इत प्रभु के निदेस निघटावन को,
 अघटित घटना घटावन को आपी तैं ।
 यातैं जानि व्यर्थ नागपासहि स्व-अथ मानि.
 रहिबो हमैं है बंध्या योंहो दृढ़ दापी तैं ।
 चौसर के दाँव सों सुआँसर परे पै फेरि,
 बदलो चुकैहौं छूटि लंकपति पापी तैं । ४१।

धाखा देइबे को राखि मन मैं बिचार इमि,
 ओखा हूँ बलीमुख बिसेस सुरभायो सो ।
 पायो अवकास ना उसाँस उकसावन का,
 तौलौं दैत्य-दल हूँ सरोस सुरभायो सो ।
 उरभि पखो यों बृद्ध बेस कपि-केसरी पै,
 गुरभि परै ज्यों तम तेज पर झायो सो ।
 हाथन तैं, लातन तैं, बातन, अघातन तैं,
 लाग्यो कपि-गातन बिघातै बिरुभायो सो । ४२।

अर्दित ह्वैकै अरातिन सों इमि,
 मारुति घोर ननर्दन लाग्यो ।
 दावत दंतन सों अधरै,
 न धरै पद गर्द बिमर्दन लाग्यो ।
 धूम धकाधकी मैं धँधिकै,
 बँधिकै अधिकै दिसि दर्दन लाग्यो ।
 बर्दन सों अड़िकै गड़िकै,
 पड़िकै पुहुमी मैं प्रतर्दन लाग्यो । ४३ ।

या बिधि सों सहि घात कुघात,
 अघात अरातिन को रिस मारे ।
 चक्रित सों चहुँ ओर चितौत,
 हितौत लखात न कोऊ बिचारे ।
 बद्ध लता-द्रुम-चीरन सों,
 मति धीरन सों छलकै बल धारे ।
 बारिदनाद के हाथ घल्यो,
 कपि जात चल्यो दसमाथ दुआरे । ४४ ।

इंद्रजीत आवत बढ़यो बाँधि कपिंदहि भौन ।
 खबर जनावन हित चले हरबर चरबर जौन । ४५ ।

इति श्रीलंकादहन काव्ये अग्न्यानयन नामकः द्वितीयः सर्गः ।

तृतीय सर्ग

अग्नि-संस्थापन

लखन कुमार को सहायक सुमार वारो,
घिरिकै अरातिन-तुमार मैं निबद्धकाय ।
ऐंच्यो जात महत मतंग मद-दर्पित सों,
खैंच्यो जात द्रोहिन सों योंही कछु दूर जाय ।
सहसा बिलोक्यो बर बिहद बिभा सों भख्यो,
राजद्वार कलित कपाट कमनीय काय ।
अति ही उत्तंग जाके स्तंग पै सुभृंग रूप,
कलस बन्यो सो रवि राजत बिराम पाय । १ ।

चख चकचौंधि जात निपट निरीछन मैं,
पास के परीछन मैं दीपत दिपायो सो ।
जात रूप-रचित महार्ह रत्न-रासिन सों,
खचित बिमोहक बनक सों बनायो सो ।
चित्रित बिचित्र चित्र पचि पचि कोरन तैं,
मति के मरोरन उरेहि उभरायो सो ।
लुंज करि डारत सुदीठि पग ज्योति पुंज,
वारत अवैयन को दूरि तैं दुरायो सों । २ ।

गज, रथ, तुरंग, सवार, पदचारी बहु,
लै लै सख सानित सतर्क रहि सावधान ।
रच्छत सदैव जाहि जतन अनेकन सों,
करिबो प्रबेस जाँमैं सहज न होत भान ।
ऐसो राजद्वार गढ़ लंक को बिराजै बेस,
तामैं बद्धबेस सों प्रबेस करि हनुमान ।
देख्यो दसमौलि की सभा को निज आँखिन सों,
जाहि लखि भागत सुरेस हू को अबसान । ३ ।

बड़े बड़े बीर बिकटानन विसालकाय,
 सक्ति, सूल, परिघ, कृपान गहि-गहिकै ।
 रच्छत असंख्य घेरि घेरि चहुँ फेर जामै,
 सक्ति पौन हू के गौन की ना चहि-चहिकै ।
 और की कहै को लोकपाल दिक्पाल सारे,
 बरुन कुबेर जम काल डहि-डहिकै ।
 सभय विनीत, छाव छोरे भाव भोरे भए,
 चाहत चितौनि कर जोरे रहि-रहिकै । ४ ।

ग्यानवान सील बय बृद्ध बहु मंत्रिन के,
 डीलवारे जंत्रिन के करकस फेरा मैं ।
 बैठो लख्यो रावनै अमात्य परिषद संग,
 तपत तपाकर समान ग्रह-घेरा मैं ।
 सहज सुभाव ही तैं वितवत जाकी ओर,
 सहमि सकात सो सुखात हृदसेरा मैं ।
 प्रबल-प्रताप पर-ताप-देनवारो देखि,
 देख्यो कपि संक ना अतंक उर-डेरा मैं । ५ ।

इविधि लवंगम प्रबुद्ध सकजीत बाँधि,
 स्वबल-प्रतीति साधि साध मैं सकस कै ।
 खार मैं खराया खिचवावत अरातिन सों,
 दुष्ट दनुजातिन सों कूर करकस कै ।
 ल्यायो पितु संमुख सगर्व समुहायो आइ,
 देख्यो कपि रावनै निरेखत नकस कै ।
 ताके दृग दीसत सरीस बीस ऐसे जैसे
 दीपत प्रदीप तम तोम मैं अकस कै । ६ ।

नीके कै निहारि नख सिख लौं निरेख्यो कपि,
देख्यो लंकनाथहिं महान दीप्तिधर सों ।
दीपत दिपै ज्यों घन-वन में प्रकासमान,
पुंज खरसान को खरायो खेह खर सों ।
ताके कृष्ण अंगन तें उफनत आभा इमि,
भासै ज्यों नवाभा घन-ओट अंसुकर सों ।
अथवा सुनीलम निलै सों कढ़ै जैसे ज्योति
बिद्युत बिकास की उदोति तेजतर सों । ७ ।

मुक्ता-मनि-मानिक-प्रयुक्त, रत्न-रासिन सों,
रंजित मुकुट दस सीस पै कनक के ।
राजै प्रति अंग पै बिभूषन रचित-हेम,
हीरक-खचित बेसकीमती बनक के ।
पहिने महीन भीन रेसमी बसन तन,
नेवर जनात ताव तेवर तनक के ।
भाल पै लसत लाल चंदन तिरेख तापै
रोस-स्रम-कन सोहै बीज से कनक के । ८ ।

बीजुरी सरीखे दरसात दंत तीखे तासु,
लंबमान अधर बिभात गिरि-खोहा से ।
बीस द्विग दीसत सरीस अरुनारे भए,
कलित कृसानु सानुमान काल कोहा से ।
बीस स्रौन बीस घनरंध्र नग-कंदर से,
दस सिर भारे सैल-सृंग सम ढोहा से ।
आप प्रान-संजुत सु हेम के सिंहासन पै,
बैठ्यो कज्जलाचल-प्रमान सजि सोहा से । ९ ।

सिर कर निकर सँजुक्त दनुजसे उक्त,
 बैठ्यो महाओजस-प्रजुक्त गर्व गहिकै ।
 व्यालाकीर्न सिखर समूह सहमंदर ज्यों,
 पंच प्रान पूरित विराजै थल लहिकै ।
 ताके भुज बीस पंच सीसवारे पन्नग से,
 दीसत अचैन बल मद मैं उमहि कै ।
 फरकि फरकि जात उकसि उकसि कस-
 मसकै सु आपुस मैं आयुध उगहिकै । १०।

साजि बर बसन बिभूषन बिसेष, प्रमदागन
 प्रमोदित दुरावर्ती चमर लै ।
 छकित छरी है सुर सुंदरी पुरंदरी सी,
 बीजन डुलावर्ती हरी सी हरबर लै ।
 अगारि अदीब है नकीब ललकारै देत,
 चोबदार चतुर जनावत खबर लै ।
 सहित समाज सुरराज के सभा सों बढ़ि,
 राजति सभा है असुरेस की दबर लै । ११।

दीसत दराज पोखराज के सुखंभन पै,
 मरकत डार मेहराब सों सुधारी सी ।
 तापै लदी छत है लदाऊ नव नीलम की,
 फटिक सिला की गच ढरबर ढारी सी ।
 भलकै भरोखन मैं चौखट प्रवाल ही के,
 कुलिस कपाट पट जुगति सँवारी सी ।
 बिहद बिभा है लंकपति के सभा की जाहि,
 जोहि दरसाति दिसि दीपति दवारी सी । १२।

दर औ दिवारन में बिबिध प्रकारन के,
नग दै सजाए हेम कुंदन कनिक से ।
गरदे बचाइवे को परदे दरीचिन में,
दरसैं सँवारे जाल मोतिन के चिक से ।
भलकैं हिरागन की भालरैं भुलति तौन,
देति हैं चिरागन की चमकैं चिलिक से ।
जेब देत फरस जरी को यों जमी पै जिमि,
आयो आसमान लै सितारे बेस बिकसे ।१३।

चंद्रमनि-चर्चित चँदोवा चारु चंद्र ऐसो,
उलह्यो अधर बीच, अद्भुत ललक देत ।
तापै पद्मराग मनि मंडित मजेजवारी,
भुकि भुकि, भूमि भूमि, भालरैं भलक देत ।
ताके तरे हीरा-हेम-निर्मित सिंहासन पै,
सासन के हेतु कमलासन कलक देत ।
बैठ्यो लंकनायक सहायक समाज साजि,
छोहिनै छलक निज द्रोहिनै दलक देत ।१४।

कारीगरी देखि दसमौलि की सभा की इमि,
वारी गई बुद्धि द्वेसकारी देवतान की ।
हारी सुर-सिल्पी की अनल्प मति आरी भई,
भारी भई सूझबूझ सुघर सुजान की ।
देख्यो नहिं लोक मैं, बिसेख्यो अहि ओक, नाहिं
रेख्यो कपि उर मैं सु रेख अनुमान की ।
मय ने बनायो जासु जोड़ नहिं जायो जग,
आपु सम आपुही सभा है जातुधान की ।१५।

रन मैं असीम भीम विक्रम करनवारे,
 उद्धत अरातिन सों जौऊ होत पीछ्यमान ।
 तौऊ बनि अर्दित समाज साज रावन को,
 ऐसो महा तेजस प्रयुक्त देखि हनुमान ।
 बिस्मित हैं सस्मित चकौहैं चख चाहि चाहि,
 थाहि थाहि थाहक निगाहन सों नीतिमान ।
 सोच पथ चारै लग्यो, सुमति सँचारै लग्यो,
 उर मैं बिचारै लग्यो करि करि तर्क मान । १६।

तर्क करि बुद्धि सों बिचाख्यो, उर धाख्यो कपि,
 जद्यपि अधर्म को करैया दसमुख है ।
 तदपि प्रताप याको अद्भुत अचिंत्य देखि—
 परत, न जान्यो जात धर्म तैं बिमुख है ।
 कैसो धैर्य, सौर्य, वीर्य, विक्रम, बिभात याको,
 कैसो सर्व लच्छन प्रजुक्त रुचि रुख है ।
 कैसो कांतिकलित सु याको दिव्य आनन है,
 भान होत दूजो दिनकर सों परुख है । १७।

होते जौ न याके कुल कर्म ही अधर्मवारे,
 तौ तौ यह समद त्रिलोक को बिजेता है ।
 होतो आज सासक सुरेंद्र-सह देवन को,
 त्रासक त्रिदेवन को प्रबल प्रनेता है ।
 तौऊ अँटि एते अघ ओघ की अटा मैं यह,
 अबलौ असह्य तेज धारत धुरेता है ।
 अवसि अपार तप-बल है आधार याकौ,
 ना तौ नमि जातो बेगि बर्चस बिचेता है । १८।

साचि सोचि याके निंदनीय कुल कृत्यन को,
 सुर-समुदाय हू सनाह सहमे परे ।
 अधतल-बासी सुधासर के सकासी तेऊ,
 भय के प्रदाहन अदाह दह में परे ।
 भूतल निवासी बल मद के बिलासी वेऊ,
 जीवन मरन के अचाह चह में परे ।
 जोरै कौन दोठि, ढीठ हठि सठनायक सों,
 सबही अतंक के अथाह थह में परे । १९।

इबिधि बिचारत मनहिं मन, कपि केहरी कुमार ।
 निरख्यो रावन को लखत, निज दिसि बारहि बार । २०।

इति श्री लंकादहन काव्ये अग्नि-संस्थापन नामकः तृतीयः सर्गः

— — —

चतुर्थ सर्ग

अग्नि प्रज्वालन

राम प्रिय दूतहिं, ससोच अति रोचत,
बिमोचत पलक पेखि, सौतुख सकायो सो ।
पूछ्यो मंत्रि प्रमुख प्रहस्त सों परुख ह्वैकै,
दसमुख रोस मैं अतीव कुरुषायो सो-
'पूछौ, यह को है, अति अभय बन्यो है जौन,
आयो एहि ठौन कहि कौन को पठायो सो ।
बिपिन उजारि, बहु बीरन सँहारि, केहि-
हेतु संक पारयो लंकपुर मैं उधायो सो' । १ ।

पाइ प्रभु आयस प्रहस्त मंत्रि सत्तम नै,
दै दै बोध उत्तम अनेक बिधि कपि सों ।
पूछ्यो, 'भय छोड़िकै बतावौ, कहौ को हौ तुम,
कौन के पठाए इतै आए कपि अपि सों ।
कीन्ह्यो केहि कारन अनेक उतपात घात,
रच्छस जमाति को उधायो तेह तपि सों ।
धारे तेज तोछन, वृषा कपि समान रूप,
कपि को सुधारे क्यों पधारे छाव छपि सों । २ ।

'त्यागि भय सम्यक स्वकीय अपराधनि को,
और बिधि बाधन को दूरि कै भरंम नै ।
मनको थिराइ, कूट कपट दुराइ, भट-
पट दै बताय, सत्य सत्य बेस कम नै ।
भेज्यो तोहिं कौन इत द्रोहिनै दमन हेतु,
करि षडयंत्र तंत्र योजित असम नै ।
धनद नदीस नै, कि आकुल अहीस नै,
कि जिस्नु असहिस्नु नै, कि बिस्नु नै, कि यम नै ? । ३ ।

‘अनृत कहे ते तव मानहृत हैहै जानु,
 प्रान तौ तिहारौ धृतमान है धरोई है।
 और व्यवधानन के बिबिधि बिधानन में,
 मोको तो लखात उपधान उभरोई है।
 यातें छूटिबे की चाह चाहै,तौ न चाहै चाहि,
 सच कहि दै तो निरबाह निकरोई है।
 हौं हूँ तोषजुक्त तू बिमुक्त होय दोषन तैं,
 फेरि तव बन्ध तौ अजुक्त ठहरोई है’ । ४ ।

सुनि यों प्रहस्त के प्रसस्त अनुसासन को,
 मानि नृप सासन सुधारि सुठि बानी को।
 बोल्यो जुक्ति जुक्त कपि पुंगव दसानन सों—
 ‘मैं हौं नहिं भेज्यो जिस्तु बिस्तुचक्रपानी को।
 समन, धनेस को, न वरुन, जनेस हू को,
 पठयो फनीस को, न रुद्र गुनग्यानी को।
 मैं हौं बानराधिप सुकंठ को सहायक औ,
 पायक प्रधान राम रघुपति मानी को । ५ ।

‘कीस केसरी की प्रिया अंजनी जनी है मोहिं,
 बायु के सुबीज तैं हमारो अवधान है।
 जनम्यो बनौकस कुबंस मैं बलीमुख है,
 पायो नाम बिधि को बतायो हनुमान है।
 अंग्रि कर बर सों उलंघि सरिताबर को,
 आयो इत चढ़िकै पिता के बलवान है।
 कपिपति काज, तव दरसन ब्याज लागि,
 बिपिन उजाख्यो, हेतु दूसर न आन है । ६ ।

‘आयो इत जानि जिय कपि तन धारिन को,
 आइबे की रोकटोक जग मैं कहूँ ना है ।
 खायो फल जौन तौन भोजन हमारो रह्यौ,
 भूख मैं न जान्यो गयौ फल है कि पीना है ।
 बिटप उजाखो सो सुभाउ ही सहज मेरो,
 कपिकुल-जात बात कीना तौन कीना है ।
 बाकी रह्यो दोष एक बधिबे बधाइबे को,
 सोऊ कियो रखिकै न रंच उर कीना है । ७ ।

‘ताप ते तिहारे किधौं दाप के दहारे दौरि,
 आपुही तिहारे बहु किंकर निकर जाय ।
 उरफि परे ते हठ हटकि हमारे संग,
 गहिकै कुटंग जंग हेतु समुहाने धाय ।
 देह प्रान संतत सबै हो प्रिय होत, यातैं,
 वाही के बचाइबे को जतन कियो हौं जाय ।
 जिन मोहि आड़्यौ तिन्हैं जीवत न छाड़्यौ अरु
 जिन नहिं ताड़्यो तिन्हैं माड़्यौ ना निकट पाय । ८ ।

‘आप ही बतावैं कहा यामैं अपराध मेरो,
 मारै ताहि मारिबो प्रसिद्ध यह नीति है ।
 सोई हम कीन्ह्यौ, दुख दीन्ह्यौ ना दिखैयन को
 और लघुभैयन को समह्यो सभीति है ।
 तौऊ जाय सुवन तिहारो बाँधि ल्यायो इतै,
 साँसति करायौ सक भरिकै सप्रीति है ।
 सोऊ भयो सह्य पै, अबोध उत्पीड़क ये,
 चरन प्रहारत असह्य यह नीति है’ । ९ ।

सुनि कपि बैन ह्वै अचैन बीसनैन बोल्यो—
 'दुष्ट ! सुष्ट बोलि बोलि एतो ना बहक तू ।
 आयो जेहि कारन पठायो निज नायक को,
 ताके इतिवृत्त के बिकास मैं जहक तू ।
 निज प्रभु नाम, धाम, काम की कथा को जथा-
 क्रम तैं सुनाइबे के लाह मैं लहक तू ।
 दहक दबाइ उर अहक न राखु, भाखु,
 अथ इतिवारो पथ पारि ना डहक तू' ॥१०॥

पौनपूत पाइ रुचि पावन अपावन की,
 सहज सुभावन सुधारि बच बर को ।
 बोल्यो, 'अस कौन जग जायौ जो न जानत है,
 राम सुभनाम भानुवंसी दिनकर को ।
 अंडज अधार बल बिक्रम अपार जाको,
 अबलौं न पायो पार कोऊ जासु जर को ।
 देवदल मंडन, अदेवदल खंडन, उदंड
 दोर दंडन दरैया दंडधर को ॥११॥

'चक्रवर्त्ति कोसल-नरेस दसरत्थ-जात,
 तात बच लागि, त्यागि सहज सुलभ राज ।
 जाइ दंडकानन संबंधु प्रिय दारा संग,
 बास कीन्ह्यो असन बसन तपसी को साज ।
 धनुधर धीर पीर निरखि मुनीसन की,
 कीन्ह्यौ खल खीसिबे को दृढ़ पन याही व्याज ।
 चौदह हजार जातुधान जनथान वारे
 मारे त्रिसिरादि खरदूषन सुभट ताज ॥१२॥

‘याही बीच बिधि के व्यलीक व्यवधान बस,
 पाय अपिधान मोहि मति महरा गई ।
 सून बिजनास्रम बिसेष तैं अलेख रूप
 माया करि जाया कोसलेस की हरी गई ।
 ता समैं न जानो गयौ कौन छलकारी कर
 हित है सती सो गहि कौन डहरी गई ।
 ताकी हूक औचक अचूक बरछी सी बेधि,
 राम रघुनायक हिए में गहरी गई ।१३।

‘कोक इव आकुल, ससोक अति व्याकुल,
 विहाय ओक बंधु सह राम अभिहारी कै ।
 बन पथ गाहत सिया की सुधि साहत,
 सु आए रिस्यमूक गिरि पास पदचारी कै ।
 तहँ करि कुंठित सुकंठ तैं मितार्ई,
 सिया खोज करवाई सौँपि ताके सिर यारी कै ।
 एकै बान बधिकै महान बलसाली बालि,
 दीन्ह्यौ कपिराजहिं सु राज अधिकारी कै ।१४।

‘स्वपद बिलुंठित, अकुंठित कपीस पद,
 पाय अवगुंठित, सुकंठ सत्यवादी सों ।
 बोलि बोलि बानर समूह चहुँ ओरनि तैं,
 पठयो निदेस दै, कठोर बनि वादी सों ।
 धाए ते असंख्य, लच्छलच्छ कोटि कोटि कढ़ि,
 बढ़ि बिखरे ते, दिसि बीच बपु वादी सों
 तिनही बनौकस बिसेसन में हौं हूँ एक,
 आयो लाँघि सागर त्रिकूट तटवादी सों ।१५।

‘आय इत सघन असोक तरु कुंजन में
देख्यो छाम बिगत अराम राम जाया को ।
वैठी छबि छीन सी, अधीन असुरीननि के
बिलपति दीन सी, मलीन क्रिसकाया को ।
देखि दुख पायो, रुष रोस में रुषायौ,
तऊ बोध उर पायो, सोध पाइ असहाया को ।
गूढ़ गति गेरन, बिमूढ़ मति फेरन, सु
आयो बढि हेरन तिहारी दिव्य दाया को । १६।

‘बोसत अबाध इव, छमिबो पराध याको,
पंडित अगाध आप बिस्व में बखाने जात ।
कीन्हो वेदभाष्य जो सुभाष्य बुध बृंदन में,
बिबुध नरेंद्रन उपास्य करि माने जात ।
पायो तप अर्जित अलौकिक बिभूति ऐसी,
यातें अर्थ धर्म के सुमर्मबिद माने जात ।
तौऊ कर्म करत, अधर्मिन समान काहे,
सर्म छोड़ि भर्म के भरोसे भय भाने जात । १७।

‘महिपतिमान बस, अथवा गुमान बस,
सान बस, आन के अटान में सकसिकै ।
बीर कहवाय, कीन्हो कायर समान काज,
द्रोह कै बिमोह बस, कोह में करसिकै ।
ल्यायो हरि जानकी, प्रमान की कथा है कहा,
देख्यो निज आँखिन, तिहारे धाम धँसिकै ।
अब तैं भलो है भल चाहत कियो जौ निज,
तौ तो छल छोड़ि, बात मेरी सुनौ रसिकै । १८।

‘सचिव सुबधु सह, सादर सिया को भेजि,
 जौ तू रघुनायक के पायँ जाय परिहै ।
 तौ तो वह औठर उदार सरदार आप,
 तेरे सब दोषन के कोषन को हरिहै ।
 ना तो जानि राखु साखि दैकै हौं सुनाए देत,
 रामरोष-पावक प्रबल जब जरिहै ।
 तब तव सलभ समान कुल हैहै बेगि,
 ब्रह्म रुद्र हू के उबराए ना उबरिहै’ ।१९।

अप्रिय सुपथ्य सम हितकर तथ्यवारे,
 बचन स्रवंगम के सुनत खिझायो सो ।
 बोल्यो दसमौलि, ‘सठहमको सिखावै ग्यान,
 गुरु के समान, ग्यान मान मैं गुछायो सो ।
 जीत्यो जौन, समन, सुरेस, दिगपाल, काल,
 कठिन कराल जस जाको जग छायो सो ।
 ताहि छुद्र मानत, प्रमानत अछुद्र नर,
 वारन बिसेस मतिवारन भुरायो सो’ ।२०।

बोल्यो कपि बिहँसि, ‘सुपंडित समान तुम,
 हमहिं संबोधन कियो जो कहि मूढ़ है ।
 सो तौ तव भूल, मूल ही मैं दरसात देखु,
 कपिकुल-जात यह बपुख निगूढ़ है ।
 ग्यानी है बिसारि लाभहानि जौन ठानि हठ,
 चरत कुपंथ सोई बिमति अब्यूढ़ है ।
 हौं तो पसुप्रानी तापै गुनी हौं न ग्यानी,
 तऊ मूढ़ता प्रमानी, तुम कैसे अति रूढ़ है ।२१।

‘अप्रिय सुने मैं, पर सक्रिय हितैसी होय,
 ऐसो बैन बिग्य जन बिहित प्रमानै हैं ।
 चाहे कहै कोऊ लघु गुरु कै बराबरी को,
 सहज सुभाव रीतिवारे ताहि मानै हैं ।
 अनुचित उचित बिचारि तेहि अंतर ते,
 सुनत निरंतर सुधीर अनुमानै हैं ।
 अनख न आनै, जोहि जख कै न जानै ताहि,
 ग्यान प्रद चख के समान सब मानै हैं । २२।

‘सो तुम सुन्यो ना, हित अहित गुन्यौ ना, निज
 सुपथ चुन्यो ना, बिधि बस प्रतिकूल है ।
 रोप्यो रारि ऐसे सो अनैसे जासु हेरे रंच,
 सकुल नसैहौ जरि बरि त्रिन तूल है ।
 जीत्यौ जग जनित अजीतन अतीत्यौ तौन,
 यह तौ अजायो जग जायो जासु मूल है ।
 आयौ सुर रंजन, मही को भार भंजन, सु
 तोसे गूढ़ गब्बरन गंजन गदूल है । २३।

‘जाके बल बिस्व यह बिस्व सो बिसेष्यो परै,
 जाके बल धारत धरा को सेष साधै है ।
 जाके बल स्त्रिजत स्वयंभू स्त्रिष्टि संकुल यों,
 जाके बल बिष्णु तेहि पालत अबाधै है ।
 जाके बल घालत पिनाकी ह्वै समर्थ जग,
 जाके बल बलकि तुहू हूँ दिव दाधै है ।
 सोई नर रूप राम, तासों बनि वाम, सुभ
 चाहै तौ बिमूढ़ता की हृद हठि बाँधै है । २४।

‘अंसी होत अंस ते बिसेसतर सिद्ध यह,
 तुम कन अंस तासु, वह अखिलंसी है ।
 तुम तपवान, वह तप्यमान तेज आप,
 आनंद अमाप, पुन्य पाप बहिरंसी है ।
 तुम अघकूप, वह अनघ अनूप सुधा-
 सागर स्वरूप नर रूप अवतंसी है ।
 तुम असुरेस, निखिलेस कोसलेस वह,
 तुम रिषिजात वह ख्यात रघुवंसी है । २५।

‘तोहि सह महिप मही को मद गंज्यो जौन,
 भंज्यौ भव धनुष कठोर तिन तर सों ।
 बिस्व बीच बिदित महान बलसाली बालि,
 ताहि कहि बदिकै सँहाख्यो एक सर सों ।
 चौदह हजार रजनीचर अकेल आप,
 माख्यो जो न वाख्यो गयो बीरबर खर सों ।
 कीन्ह्यो काज अमित अछुद्र जाहि जानौ भले,
 तौऊ ताहि काहे अनुमानौ छुद्र नर सों । २६।

‘छुद्र तुम अमित महान बलसाली वह,
 तासों जु पै तेरी, सत्रुताई जुटि जायगी ।
 तौ तो जानि राखु, हौं सुनाइ समुझाए देत,
 तेरे सगे बंधु की सगाई छुटि जायगी ।
 सहज सधाई साहिबी मैं, लगि लाह बीज,
 नाक लौं बंधाई धाकधाई खुटि जायगी ।
 डंका देत ऐहैं जब बंका कपि भालु बीर,
 लंका तब सोनकी बनाई लुटि जायगी । २७।

जदपि सुरासुर सँघर्ष मैं सनातन तैं,
यहि बिधि आवत पुरातन बदी चली ।
तदपि सुभक्त प्रह्लाद के प्रभावन तैं,
रुक सी गई ती जाहि बीतत सदी चली ।
सो तू नई कीन्हीं नीच मीच बस जानत ना,
जब रन राघव की बान गरदी चली ।
तब सह रच्छस निकाय, काय भूधर से,
तेरे बहु स्रोतित की निकरि नदी चली । २८।

ऐहैं नहिं काम ये हराम के गुलाम तेरे,
इनके बदन छाम छाई फिरि जायगी ।
ल्याई गई लूटि जौन निधि की निकाई तौन,
संपति सबाई घर आई फिरि जायगी ।
प्रभुता प्रभूत अति अद्भुत अकूत जौन,
तप करि पाई तौन पाई फिरि जायगी ।
जाई फिरि जायगी, न जाई फिरि जायगी औ,
तेरे पुर राम की रजाई फिरि जायगी । २९।

केहरी बधूना बेहरी के बस बाँधे रहै,
नेह रोति राधे देहरी ते रधि रहिहै ।
वैसई अराम मैं तिहारे राम जाया आय,
अमित अराम पाएहू ना राम रहिहै ।
ताके हेतु सकुल तिहारो नास हैहै जानु,
एते बड़े बस मैं न सेस अंस रहिहै ।
रहिहै अतंक लंक बासिन हिए मैं अरु,
तेरे कर केवल कलंक अंक रहिहै । ३०।

तुम्हें का दिखावैं भय, भीति भरे आप तुम,
 नातो छल करि मदबल बिसरायो क्यों ।
 जग विजयी हूँ जाय निजई रघूत्तम सों,
 लरि भगिनी को निज बदलो चुकायो क्यों ।
 कपट कुरंग संग ढंग करि कायर लौं,
 छुद्र नर जानि ताहि दूरहिं दुरायो क्यों ।
 छायो लोक अजस, लगायो बीरता मैं आँक,
 सूने जानकी को हरि निज गृह लयायो क्यों । ३१।

राघव प्रताप ते सदाप हम आपुही ते,
 सहज समर्थ प्रभु अर्थ साधिबे मैं हैं ।
 तोहिं सह अमित अराति अनुयायिन को,
 खेल सौं अकेल हम दच्छ दाधिबे मैं हैं ।
 बद्ध मति जानै तू अबद्ध बिधिना के घर,
 दृढ़ कटिबद्ध तव काल काँधिबे मैं हैं ।
 पर निज नायक निदेस बिन सक्य होत,
 परम असक्य सों अनर्थ साधिबे मैं हैं" । ३२।

ब्यंग बिख चीखे बर बिसिख सरीखे, तीखे,
 बचन अदीखे कढ़ि मुख ते बनारी के ।
 बिधिगे इबिधि जाइ उर मैं तमीचर के,
 जिमि बिधि जात तम कर सों तमारी के ।
 अंग उछ्यो थहरि, लहरि दृग रंग उछ्यो,
 ढंग उछ्यो गहरि, कुढंग रिसवारी के ।
 कैन बिरहित हूँ, न बैन कढ़ि आयो मुख,
 फेन बहि आयो दसो मुख ते बिकारी के । ३३।

स्व-पर-हिताहित, विवेक विरहित हूँ कै,
 अमरषवान दसकंधर रुषायो सो ।
 घूरत कराल काल सदृस कपीस दिसि,
 सूरत भयंकर बनाय कुरुषायो सो ।
 बोल्यो घनसदृस ननर्दत अरातिन सों—
 “यह सठ बर्बर बलीमुख बिषायो सो ।
 बोलत कुबोल याहि बधि करि डारौ बेगि,
 खोलन न पावै मुख फेरि परुषायो सो” ॥३४॥

कपि बध लागि क्रोध अंध दसकंधर को,
 दारुन निदेस सुनि उर अति क्लेश आनि ।
 न्याय प्रिय निपट अभीखन बिभीखन त्यों,
 सुपथ सुभाइबो स्वकीय करतव्य जानि ।
 तजि निज आसन, सिंहासन समीप जाइ,
 पाइ रुष स्वमत बिकासन को जोरि पानि ।
 सादर बिरादर वरिष्ठ सों बिनीत बनि,
 बोल्यो बर वचन विवेक विरचौ हैं बानि ॥३५॥

“करिय छमापन स्वरोष तजि रच्छसेस,
 सांतचित्त बिहित विवेक बलधारौ तौ ।
 अर्थ-धर्म-तत्त्ववारे वचन हमारे सुनि,
 उचितानुचित उर अंतर बिचारौ तौ ।
 साम्प्र-बुध-संमत परेख्यो कितै दूत-बध,
 संत-मत हूँ मैं कहूँ देख्यो उर धारौ तौ ।
 पूर्वा पर ग्याता, राजनीति के बिधाता कितै,
 कीन्ह्यो यह कर्म सो अभर्म हूँ उचारौ तौ ॥३६॥

एक पै अनेक बिस्व बिदित जु भैयन को,
 भेजि बँधवाइ, फूल जल सों प्रचारे को ।
 तापै निज संमुख बुलाइ दै घनेरो दुःख,
 नाटक रचायो न्याय नीति के अचारे को ।
 बिकट बली है काल हू ते प्रबली है निब-
 ली लौं भीति मानि लेत जीवन लचारे का ।
 तौ तो फेरि होनी जौन होय, तौन होत यामैं
 कौन बिबस बनौकस बिचारे को । ३७।

पर यह जानि लीजै, रच्छस-प्रधान आप,
 सासन बिधान कौ निधान घटि जायगो ।
 सारे राजनीति, रीति रंजित बिचारन के,
 स्रम फल बाद में प्रमाद पटि जायगो ।
 न्याय नटि जायगो, निषेध बिधिकोषन तैं,
 दोषन में बेहद, बिबाद अँटि जायगो ।
 लोकन में राबरी कुकीरति कथा को,
 यथारीति सों यथारथ प्रसाद बँटि जायगो । ३८।

पंडित हैं आपु जौ गहेंगे रोष रोष लखि,
 तौ तो बुद्धिकोष में, न तोष रहि जायगो ।
 जावत अधीत निगमागम निचै को फल,
 मेरी जान केवल समैही रहि जायगो ।
 क्रम रहि जायगो न संयत अतिक्रम को,
 अरि के अभिक्रम को भ्रम रहि जायगो ।
 जायगो उपक्रम उदार व्यवहार वारो,
 बिक्रम को सक्रम बिकार रहि जायगो । ३९।

काज यह राजधर्म हू के है बिरुद्ध सुद्ध,
कारन है लोक मैं कुख्याति अरु निंदा को ।
याते आपु सरिस सुबीरन के योग्य नाहिं,
करिबो कुघात काहू भाँति सों कपिंदा को ।
सास्त्र-स्रुति-सार और सँभार पर-पूरब को,
जानत सबै ही आप नीति जो नरिंदा को ।
ताको सोधि, रोधि रोष, दोसहिं बिरोधी प्रति,
न्याय करिबोई है बिधेय असुरिंदा को । ४०।

केतो करै कुत्सित कुकाज जौ बसीठी व्याज,
न्यायी नृप नैकु ना बिचारै नुकसानी को ।
रोकि उर रोष, न्याय कोष निरुआरि नीके,
चारि बिधि दंड को, बतावै बुद्धिमानो को ।
मुंछित करावै, कै बिरूप करवावै चहै,
कोड़े लगवावै, कै मिटावै चिह्न प्रानी को ।
और दंड, यहि तजि, देत नहिं देख्यो सुन्यो,
सोई आप दीजिए बिचारि हित हानी को” । ४१।

अनुज बिभीखन के बचन सुनत तौलि,
बोल्यो दसमौलि — “तू न जानै कहा हित है ।
पापिहिं बधे ना होत पाप कहूँ काहू भाँति,
यातें याहि छाड़िबो बिबेक बिरहित है ।
जद्यपि बनत दूत यह अपुने ते पर,
चर-पन ही मैं याको पौरुष निहित है ।
कपिना कसाई आतताई है उपाई बड़ो,
याको बध धर्मसास्त्र बिधि सों बिहित है” । ४२।

कीन्ह्यौ प्रतिवाद कर जोरि कै बिभीखन यों—
 “मेरे जान नाथ यह कैसहू न चर है ।
 होतो चर जौ तो अनजानत यहाँ पै आइ,
 काहू बिधि सोध पाइ, जातो लौटि घर है ।
 याबिधि प्रकास मैं न स्वबल बिकासतो औ,
 त्रासतो न लंकपुर बासिनै निडर है ।
 आवतो न रावरे सकास अवकास पाइ,
 पलटि परातो जौ न होतो दूत वर है ।४३।

सबिधि विचारि, नय नीति निरधारि नीके,
 सुनिए अरज मेरी जौ पै समुचित होय ।
 आन दंड दीजिए अजोग जोग जानि जिय,
 बध मत कीजिए, किए जौ अनुचित होय ।
 याते जस रावरे को बिकसित है है बेस,
 लोकन के ओक मैं समोद सुपचित होय ।
 यह हू लजै है औ सजै है कल कीरति को,
 जै है जब लौटि निज नाथ पै सुचित होय ।४४।

बैरी यह जद्यपि महान है भठान ठान,
 ठान्यो अभिमान बस, जान्यो ना कुफल को ।
 आन्यो कछू संक ना हिए मैं लंकनायक को,
 मान्यो ना अतंक उर रंचक प्रबल को ।
 जद्यपि है उद्धत, उदंड दृढ़ दंडनीय,
 दीसत सबै बिधि सुधारे छाव छल को ।
 तदपि बसीठि बनि आयो ढीठ रावरे पै,
 याते आन दंड कछु दीजै आप खल को ।४५।

प्राणदंड उचित न दंड है उदंडन को,
याते मिटि जात जातनाही जिंदगानी को ।
छूटि जात भोगे बिना फल अपराधन को,
पाइ छन एक क्लेश स्वकृत अमानी को ।
दंड तौ वहै है उपयुक्त जौन जीवन में,
भोगै फल दंडित बिसेष लाह दानी को ।
गुनि गुनि रोवै रोज रोज निज कृत्यन को,
तबहून खोवै दुख, दुसह दिवानी को” १४६।

बचन बिसारद बिभीखन बचन बर,
सुनि दस सीस, अति सोच मैं निरत भो ।
रोकि रिस बेग, बेगि बिहँसि चषिगित सों,
संमति जनाइ दूत बध तैं बिरत भो ।
दै कै पुच्छ जारन को, पुर मैं प्रचारन को,
आयस कपीस हित, भोग मैं भिरत भो ।
तिरत कराल काल बारिधि बिलास बीच,
आपति अवर्त मैं अचानक गिरत भो १४७।

सुनि निदेस दनुजेस को, दारुन दनुज समाज ।
खैचि लै चले करख सों, ऐंचत तन कपिराज १४८।

इति श्री लंका-दहन काव्ये अग्नि-प्रज्वालन नामकः

चतुर्थः सर्गः ।

पंचम सर्ग

अग्नि-निर्वापन

लषन समान राम चषन चका समान,
बीर हनुमान को, कुदंड सुनि ईहा सों ।
अमरषमान - जातुधानदल धाए फेरि,
ल्याए तेल, तूल, सन, बसन, समीहा सों ।
घेरिकै अगेरि, कपि पुच्छहिं, प्रतुच्छ सारे,
दै दै पट पेटन, लपेटै लगे तीहा सों ।
धूरि मैं धुरेटै लगे, चपरि चपेटै लगे,
द्रोह तैं दपेटै लगे, दुष्ट दल दोहा सों । १ ।

ज्यों ज्यों लगे मढ़न बिमूढ़ सन तूल दै दै,
त्यों त्यों कपि पुच्छ क्रम क्रम सों बढ़ै लगी ।
बैठि पट ओट मैं अगोट ग्रहवारी दसा,
औरै तौर नियति बिगूढ़ता गढ़ै लगी ।
पीड़ित अतीव ह्वै छतीव तिन दुष्टन तैं,
हरि रुख रोख की रुखाई सी कढ़ै लगी ।
रहि रहि ओठन तैं चल चष कोटन तैं,
गोठन तैं आग कैसी लपट कढ़ै लगी । २ ।

काँधि काँधि ल्याइ सन, बसन, दुकूल, तूल,
बाँधि बाँधि तुच्छ हारे पुच्छ मैं लँगूरी के ।
तबहुँ न पारे ढाँपि नापि नापि हारे जऊ,
सारे भए ऐसहू कुख्याति कनगूरी के ।
अंत थकि, डारि नेह, बारि दीन्ह्यो पावक दै,
लै चले फिरावन को बातस बगूरी के ।
हेरि हेरि हाँसैं, घेरि घेरि उपहाँसैं, फेरि,
फेरि, हठि त्रासैं, मते ओज मैं अँगूरी के । ३ ।

पावक परस पाय पुच्छ मैं प्रताप बिन,
 सोच्यो कपि आप यह कारन कहा रह्यो ।
 जाते रंच लागत न मोकहँ उताप ताप,
 जद्यपि सँताप सों, ससंकित समा रह्यो ।
 मोहिं जानि परत प्रताप रघुनायक को,
 पायक सों सतत सहाय करि ह्याँ रह्यो ।
 याही तैं दहन मोहिं दाहत न पाहत है,
 जानिकै सखासुत उमाहत महा रह्यो । ४ ।

ढक्का,भेरि,डिंडिभि,नफेरि,संख आदिकलै,
 जातुधान जावत बजावत उलै चले ।
 अरि-पख-वारे काल सम रखवारे घेरि,
 अमरख-वारे बहु बलकि बलै चले ।
 डाह सों डहकि गाह गावत गुनाह गीत,
 गंधवाहनंदनै पनाह बंद लै चले ।
 नगर फिरावत थिरावत बगर सौहैं,
 डगर डगर देत हाँक बहु लै चले । ५ ।

कपि कृतकृत्य भो कुकृत्य लखि द्रोहिन को,
 मोहिन को मानस मजेज लखि जकि गो ।
 तदपि विवेक सों विचारि व्यवहार बिधि,
 स्वबल विकासन को बेहद बलकि गो ।
 मानि सुठि औसर सुदैव अनुकूल जानि,
 अरि-मद भानिवे के ब्योंत मैं बरकि गो ।
 सहत कुघात घात नाना उत्पात जात,
 खैच्यो बातजात घात हेरत ठमकि गो । ६ ।

ज्वलत हुतासन निहारि रिपु-सासन को,
 स्वबल बिकासन को औसर अनूठो पाइ ।
 सोच्यो करि गौर कपिवर केहि तौर लेउँ,
 बदलो बिहित एहि ठौर ठीक ठहराइ ।
 जदपि उजारि बन बिपुल सुभट ब्यूह,
 सबिधि सँहारयो एक भाग बल समुदाइ ।
 तदपि बच्यो है अबै मुख्य बल रावन को,
 दुर्ग, ताकी दुर्गति बनैबो नीक दरसाइ । ७ ।

इमि करि निश्चय सँकोचि तन बंधन तैं,
 निबुकि सुबुक ह्वैकै उछारि अटा चढ़यो ।
 बैरि बल भंजन प्रभंजन-तनै को रूप,
 मंदर प्रमान ह्वै बुलंद बिहदै बढ़यो ।
 भूतल अकास अवकास परिपूरति, सु
 मूरति महान सानुमान सुखमा मढ़यो ।
 मानो कीसकाय बिध्य रबिरथ रोधन को,
 सोधन बिरोध लंक-पंक-पथ लै कढ़यो । ८ ।

गरज्यो महान घन स्वन सों हँहाँस करि,
 फेरयो पुच्छ पावक प्रचारि पुर फेरा मैं ।
 मरुत सहाय पाय गरुत गती सों बढ़ी,
 झपटि लपट लोल लंक गढ़ घेरा मैं ।
 आगि उठी भभकि लभकि लागि लागि उठी,
 जागि उठी बिपति बिसेष हृदसेरा मैं ।
 देवन को जाप लाग्यो सीता को सराप लाग्यो,
 रावन को पाप लाग्यो असुर-बसेरा मैं । ९ ।

मायामई आगि उठी जागि छन एक ही मैं,
 एकै साथ चारो माथ घेरि लंक पुर को ।
 लागीं जरै महल अटारी हेमवारी जड़ी,
 कंचन केवारी पाइ पावक प्रचुर को ।
 रातो भयो आसमान, तातो भयो भासमान,
 कारो पीरो नीर सिंधु तीर अगहुर को ।
 पच्छी उठे फुलसि कुलसि जल जच्छी उठे,
 मच्छी उठे उलसि अलोड़ि अब्धि-उर को । १०।

दाहाकार धाख्यो जब पावक प्रदाहाकार,
 उमख्यो महाहाकार हाहाकार हावा को ।
 ताको जोग पाइ बह्नि सिखर प्रखर ह्वै ह्वै,
 निखर निखर लेत चूमि नभ तावा को ।
 कारो, पीरो, नील, लाल, हरित बरन ह्वै ह्वै,
 धूम मँडरात घूमि घूमि करि कावा को ।
 ताको बिंब उदित अकास प्रतिबिंबित कै,
 मानो इंद्र चाप छायो छोर अरगावा को । ११।

अचल त्रिकूट पै सुलंक चहुँ खूँट फेरि,
 बह्नि कूट सिखर अटूट इमि भासै है ।
 जैसे जुग अंत जानि कालानल क्रुद्ध ह्वैकै,
 सुद्ध निज उद्धत स्वरूप प्रतिभासै है ।
 फेरि दिगमंडल अखंड ज्वाल मंडल सों,
 कोटिन अखंडल सों भभकि बिभासै है ।
 मानो ब्रह्मंड फोरिबे को बज्रनाद चंड,
 चंडरव पावक प्रचंड ह्वै प्रभासै है । १२।

औचक अकास लौं प्रकास पेखि पावक को,
 पच्छिन के सावक स्वपच्छ सिहलै उठे ।
 नीड़ तजि संकुल बिहंग कुल आकुल ह्वै,
 क्रंदत तुमुल बृंद बृंद नभ लै उठे ।
 प्रमदा प्रवीन औ नवीन बलहीन छीन,
 बालक बयस्क बृद्ध दीन बिकलै उठे ।
 विविध बिलाप औ प्रलाप सह एकै साथ
 करुना-कलाप को अलाप सब लै उठे । १३।

एती बड़ी देह पै इतीक हरुआई भरी,
 मंदिर ते मंदिर उछंगि चढ़ि-चढ़िकै ।
 लाग्यो लंक दाहन प्रदाहन अनख आनि,
 गब्बर गुनाहिन पनाह बढ़ि-बढ़िकै ।
 प्रमुख प्रमुख सरदारन कुमारन के
 सुभट करारन के गोह कढ़ि-कढ़िकै ।
 फूँकि दीन्ह्यो मारुति मिसाल खरचाल हाल,
 मानी महामानस मलाल मढ़ि-मढ़िकै । १४।

फूटै लगे हीरा-मनि-गन के जखीरा जड़े,
 कन कन ह्वैकै छूटि छिति बिखराने ते ।
 जात रूप पत्तर महत्तर उताप पाइ,
 सत्तर सतर ह्वै झँवाइ फिखराने ते ।
 पिघलि पिघलि लाख दाख को खमीरा बनि,
 उबलत धूम देत मेचक खराने ते ।
 टूटन पखान लागे गिरि के बिखानन तें,
 अनल सिखान के निखात निखराने ते । १५।

जतन समेत राखे रतन समूह जौन,
अपहृत भाग जच्छ नाग सुर सिधि के ।
मुक्ता-मनि-मानिक असंख्य बहु-खानिक के,
लोक में प्रमानिक, प्रतत्व नव निधि के ।
बासन बसन जान सैय्या उपधान आदि,
पट-परिधान मूल्यवान बहु विधि के ।
लावक समान परि पावक प्रभाव बीच,
छावक भए ते बनि आहुति समिधि के । १६।

क्रंदन करत घोर अबला अरातिन की,
लट-पट-खोले गिरौं लटपट घूमि घूमि ।
भरकत भागीं भय भरिकै भभरि भूरि,
भीखन उताप पाय झपटत मूमि मूमि ।
कोऊ पय प्यावत सिसून कलपावत न,
नैकु कल पावत, चुपावत सु चूमि चूमि ।
दौरी जात बौरी-सी अगौरी बाल कौरी लिए,
भुकि भुकि भारत अगिनि कन तूमि तूमि । १७।

आरी भई नारी मनि महलनि वारी सारी,
लपट करारी हेरि भारी भय-भेद तैं ।
सँभरि सकी ना उठीं भभरि छनेक भरि,
भरि भरि नैनन निरीह निरबेद तैं ।
नेवर नेवारि पग जेवर उतारि, देह
हरुए स्वगेह त्यागि सिथिलित सेद तैं ।
भागी जात, एकन के संग एक लागी जात,
परम अभागी जात खाली जात खेद तैं । १८।

गारी देत कदम अगारी देत कोऊ बर्दी,
 नगर पगारी देत धाई सिंधु-बेला मैं ।
 कोऊ मतवारी परि मद की खुमारी माहिं,
 लहिकै दवारी गिरीं घूमि हृद हेला मैं ।
 कोऊ खीन लंकवारी, कोऊ पीन अंकवारी
 सकुचन दाबि कुच रपटति रेला मैं ।
 बहु बल खात जात अटपट चालन सों,
 लटपट-हालन सों भूपटि भ्रमेला मैं । १९।

टेरि टेरि तात मातु स्वामि सहजातन को,
 और हितनातन को लै लै नाम फेरि फेरि ।
 हाहा खाति अति बिललाति कुररी सी दीन,
 ज्वालजाल आधि अधिकाति चहुँ हेरि हेरि ।
 कहति पुकारि दोख निदई दई को कहा,
 वह तौ दई है हमैं बिपति अगेरि गेरि ।
 कौन यहि औसर बचावै धाय आय हाय,
 काल रूप बानर जराए देत घेरि घेरि । २०।

प्रथमहिं भाख्यो हम यह कपि जाती नाहिं,
 सुमनस घातिन को जाहिर जवाल है ।
 सुरपति जोजित बिपत्ति लंकवासिन को,
 नाक के निवासिन को कामिल कमाल है ।
 कैतो छली बिस्तु रूप बदलि बलीमुख को,
 आयो दनुजादन को करन हलाल है ।
 कैतो पिंगलोचन बिसाल बपु धारे आपु,
 कैतो बिश्वअंतक दुरंत यह काल है । २१।

नाना बिधि करति बिलाप बिललाती सबै,
प्रचुर प्रलाप कै अलापति अतीता को ।
कोऊ कहैं यह तौ उताप नहिं अर्चिख को
संकुल सँताप है सताप अनुनीता को ।
मूढ़मति रावन समूल के जरावन को,
ल्यायो घर घेरि आपु अजस अधीता को ।
पति-पद-प्रीता पर-रति-मति-भीता यह,
पावक-पलीता है सराप तेहि सीता को ।२२।

बोली अन्य बिकटा कटा सी करि बीच ही मैं,
सिगरे अनर्थन को मूल यह सीता है ।
याही के बुलाए यह बानर हँडेरी इतै,
विपति घनेरी लिए आयो बलबीता है ।
याही के लहाए प्रमदावन प्रनष्ट कीन्ह्यो,
नष्ट कीन्ह्यो असुर अनीक जग जीता है ।
याही के छुड़ावन की जुगुति जुड़ावन को,
कूँके देत लंक लाय पुच्छ पै पलीता है ।२३।

योंही बहु रोदति बदति असुराती सबै,
पीटि पीटि छाती बिललाती दाह दुख तैं ।
कोऊ यहि औसर दिखात ना सँघाती हाय,
जाती ना बिजात! अपघाती के कलुख तैं ।
लपटी लपटि जात द्वारन किवारन लौं,
कैसे कै कढ़ेंगी यहि पावक परुख तैं ।
कुलस्यो सदन जात भुलस्यो बदन जात,
सुलस्यो छदन जात छपट्यो बपुख तैं ।२४।

हाहाकार माच्यो इमि चारो ओर छोरन लौं,
 स्वाहाकार नाच्यो पूर पावक प्रबल हूँ ।
 हारै हौंस हिम्मत बिसारे रकसारे सारे,
 घर ते निसारे जात भागे बिहल हूँ ।
 माया तजि जाया सुतबंधु की स्वकाया लिए,
 असुर-निकाया भरी भीति सों निबल हूँ ।
 इत उत दौरत दरेरत दुरे से जात,
 बिबस बिसेख बिललाने से बिकल हूँ ।

औचक निबुकि जात देखि कपि बंधन ते,
 रच्छी भए भौंचक से चौचक खरे खरे ।
 इकटक जोहत जके से मुख बाय बाय,
 कहत न कोऊ कहुँ काहू सों हरे हरे ।
 पावक प्रबल पखि चपरि चिहुँकि धाए,
 धरु धरु मारु मारु बोलत दरे दरे ।
 लागत उताप ताप अति थरराने तेऊ,
 पलटि पराने फेरि कहत जरे जरे । २६।

ठौरै ठिकी भीर जौन कौतुक बिलोकिवे को,
 सो तो लखि या बिधि कुतौर तौर हहरी ।
 लै लै जल भाजन बिसेख चख लाजन ते,
 धाइ धाइ अनल बुझाइबे को छहरी ।
 पाइ पाइ नीर हूँ अधीर अधिकानी आँच,
 जैसे अधिकात घृत पाइ ब्वाल जहरी ।
 रुकति न रोकी बढ़ी जाति बस बाहिर हूँ,
 जाहिर जनात घात पाइ बात बहरी । २७।

देखि रुख रोचिख रुखाय रोखवारो कपि,
लीन्ह्यो दंभ सहित उखारि खंभ पावा को ।
परिघ प्रमान मान करि भ्रममान बेगि,
धायो उदबेग सों उधायो धरि दावा को ।
भागत अरातिन को घेरि दनुजातिन को,
धरि धरि धूनै लग्यो खूनै खल खावा सो ।
मति गति गूनै लग्यो हति हति हूनै लग्यो,
भूनै लग्यो मार मैं सँभारि लोय लावा को । २८।

टोंकि टोंकि दनुज दुरातिन सँघातिन को,
रोकिरोकि आगि मैं कपीस धरि भोंके देत ।
जैसे हूँ उदार खर भार औ खभार लै लै,
भूँजा भार भार भार माहिं धरि झोंके देत ।
लौह तोष पावत न रोखित अतोखी बीर,
दोखिन को दोख देखि देखि दरि भोंके देत ।
जैसे अनतोखी बनि कठिन कराल काल,
जीवहिं दुकाल मैं हलाल करि भोंके देत । २९।

भागवस बचत न भागि जन कोऊ कहूँ,
लागत सुराग कपि कूदि किलकारे देत ।
अगरि अगेरि घेरि खंभ चोटकारी हनि,
दंभिन को दंभ तौ अरभ मैं उतारे देत ।
फेरि पद पकरि, पछारि छिति छारन मैं,
तिपट निछारि नभ-पथ मैं उछारे देत ।
गिरत गिरत मारि परिघ प्रहारन सों,
धधकत आगि मैं बिराग बस छारे देत । ३०।

दैव नहिं तृप्त होत बिपति ढहाए बिना,
 बिपति न तृप्त होत दुख दुलहैबे ते ।
 दुख नहिं तृप्त होत सुख बिनसाए बिना,
 सुख नहिं तृप्त होत बायु उमहैबे ते ।
 बायु नहिं तृप्त होत सिखि अनखाए बिना,
 सिखि नहिं तृप्त होत जीव पचहैबे ते ।
 जीव नहिं तृप्त होत हरि-पद पाए बिना,
 हरि नहिं तृप्त होत दनुज दहैबे ते । ३१।

पाइ पाइ पुष्ट पुष्ट आहुति अतुष्ट इव,
 पावक लपट लोल झपटि बढ़ै लगो ।
 मज्जा मेद मांस चर्म स्रोनिन बसा सों बसी,
 गंध निरबंध अंध गति लै बढ़ै लगो ।
 अर्चिस उताप अँटि चटकत अस्थि कूट,
 ताकी चट्ट चट्ट धुनि दिसनि दढ़ै लगी ।
 भय की भयावनी बिभीषिका भयद हँ हँ,
 लंकपुर बासिन के चित पै चढ़ै लगी । ३२।

कछुक अभागे अनभागे जरे आपो आप,
 कछुक सभागे भागि, आगे जाइ बरि गे ।
 कछु कढ़ि भागे परि परिघ प्रहारी हाथ,
 कारी चोट खाइ ते बेगारी ते उबरि गे ।
 कछु दुरभागे दुरभाग निरवारन को,
 करत प्रयत्न आयु रत्न सों निबरि गे ।
 जरिगे असंख्य परि पावक परत बीच,
 ऐसे ना लखात जे निखात निबरि गे । ३३।

ज्यों ज्यों जगी आगि त्यों त्यों रागिन बिरागिनके
 अंतर बिसेस बिकलाई सी बढ़ै लगी ।
 बिद्याधर जच्छ नाग किन्नर कुमारन के,
 हिय मैं अनंद अधिकाई सी नढ़ै लगी ।
 देखि देखि अद्भुत अभूत कपि कृत्यन को
 सुरन उरन मोदताई सी मढ़ै लगी ।
 सिद्ध मुनि चारन सुरेंद्र संघ वारन के
 बदन ललाई बहुलाई सी बढ़ै लगी । ३४।

फूँक्यो गढ़ लंक बंक पालित दसानन को,
 देखि नभ दर्सक बिमोह तरखै लगे ।
 आह कहि वाह कहि कोऊ त्राहि त्राहि कहि,
 पाहि पाहि कहत पनाह करखै लगे ।
 खेल सों अकेल खल दल मल रासिन को
 खूनत निहारि दनुजारि हरखै लगे ।
 अस्तुति करत पौनपूत पर प्रस्तुत है,
 सुमनस सुमन समूह बरखै लगे । ३५।

बोले कर जोरि सुर संकुल बिनीत है है,
 “जय हनुमान जय जय करुना निधान ।
 भानु प्रिय सिष्य ग्यान घन अवतिस्य रूप,
 धारे जन्म ही ते ब्रह्मचर्ज व्रत को बिधान ।
 प्रग्यावान सचिव प्रधान कपिनायक को,
 बुद्धि बलवान दीन दुःखिन को व्यवधान ।
 खल बल दहन किसानु गुनवान जै जै,
 सीलवान, सज्जन, स्वभक्तन को उपधान । ३६।

जय कपिनायक अनन्य राम पायक जै,
 सिय सुखदायक सहायक सुकंठ को ।
 बुद्धि बल ओघ को अमोघ परिचायक,
 स्वभक्त भक्त भायक बिभास सित कंठ को ।
 पुन्य प्रनिधायक विधायक विधान विधि,
 हृदतर घायक दनुज दसकंठ को ।
 सब विधि लायक समर्थ दुःख हायक,
 सुनीति को निधायक कुमार बहुकंठ को । ३७।

तुम बिन कौन नाँधि सागर बलागर है,
 दुवन पुरी मैं धँसि सोधि प्रति धाम को ।
 मोचत सिया को सोच, दोचत बिरह पोच,
 सुजस सुनाय राय रघुपति राम को ।
 भंजि प्रमदावन बिभंजि बल रावन को,
 गंजतो को असुर अनी के खल खाम को ।
 रच्छित अधच्छित बलाढ्य गढ़ लंक ताहि,
 करतो दहन कौन बाँधि इमि लाभ को । ३८।

जेतो काज दुस्तर अनेक तुम कीन्हो एक,
 वेतो करि सकत जनेक ना बरग मैं ।
 तेरी पूत प्रगति समान सब तत्वन मैं,
 याको मिल्यो पूरन प्रमान या सरग मैं ।
 जाना नहिं जाति है कितीक हरुआई भरी,
 बल गरुआई बीर तेरे रग रग मैं ।
 अबहूँ चुक्यो ना करि गारत गनीम गढ़,
 चाहत रुक्यो ना पुर पारत परग मैं । ३९।

धन्य तव जमनी-जनक जिन जायो तोहिं,
 धन्य तव बंस जौन पायो तोहिं अंसी कै ।
 धन्य वह काल जामैं उलह्यौ प्रसूती गोद,
 धन्य वह देस जौन उमह्यो धुरंसी कै ।
 धन्य तव नायक सहायक सरूप जौन,
 पायो तोहिं पायक, स्वअंक अवतंसी कै ।
 धन्य कपि आप तुम निज सुचि कृत्यन ते,
 हम सब धन्य आजु तोहिं स्वयमंसी कै" ॥४०॥

इविधि नभस्थ देव दर्सक समस्त मिलि,
 करि करि अस्तुति प्रसस्त कपि बर की ।
 लागे लखै व्यस्त है है बिपति अरातिन की,
 दुर्गति घरातिन के घर औ बगर की ।
 देख्यो दह्यमान मुह्यमान नर नारिन को,
 साँस लेत अंतिम ऊसांस लेत अरकी ।
 संपति बिसेस कछु सेस सना बिसेखेमिली,
 लंकपुर-बासी चर अचर खचर की ॥४१॥

आवाँ भयो लंक भूमि अंक तपि तावा भयो,
 भावाँ भए बासन बिभूखन खरे परे ।
 ठौर ठौर नाग पसु पच्छी रच्छ रच्छिन के,
 असुर बिपच्छिन के सब बिखरे परे ।
 लाख है है लाख कोट कनक कलाख है है,
 हाटक के फाटक निराट निखरे परे ।
 धूम बस रेखत निरेखत बनत नाहिं,
 पादप दपादप बरत बिखरे परे ॥४२॥

तेई बचे जेई भागि जाइ गिरि कंदरन,
 अंदरन दबकि दबकि दहि दहि गो ।
 तेई बचे जेई बन-अंतर इकंत जाइ,
 काहू भाँति भुलसि झवाइ भहि भहि गो ।
 तेई बचे जेई, जलनिधि की तरंग परि,
 ढंग करि निपट उलंग बहि बहि गो ।
 तेई बचे जेई तजि कुमति कुटेई राम-
 भक्ति-रसपेयी ह्वै डटेई रहि रहि गो ।४३।

एक भक्त भूखन बिभीखन भवन छोड़ि,
 सारो गढ़ लंक सब दिसि सों जरायो फेरि ।
 काज करि ईश'को अकाज असुराधिप को,
 कपिकुलराज कूदि सिंधु मध्य आयो फेरि ।
 सागर मंभाइ कै थिराइ सियराइ सम,
 सकल बिहाइ बेस विकट दुरायो फेरि ।
 रूप लघु लै कै धन्य-रूप स्वकुलै कै सिय,
 पद पै उलैकै, दीन बचन सुनायो फेरि ।४४।

“मातु पाइ आसीस तव, करि दस सीसहिं खोस,
 जान चहत अब 'ईश' पै, दीजै कछु बकसीस ।४५।
 जैसे इत आवत हमैं, प्रभु कर-मुँदरी दीन्ह,
 वैसेइ प्रभु पहिचान हित, दीजै कछु निज चीन्ह ।४६।
 अछत देह लखि कपिहिं ढिग, अछत बिरह मति भोरि ।
 सछत हृदय, गदगद बचन, बोली सिया बहोरि ।४७।

इति श्री लंका-दहन काव्ये अग्नि-निर्वापनो नामकः

पंचमः सर्गः

षष्ठं सर्गं

अग्नि-प्रत्यागमन

सीता सती पाइ स्वयमागत कपीसै पास,
हरष हुलास भरि गदगद बानी सों ।
बोलीं सुठि सहज सनेह सरसावत,
ममात दरसावत समोइ कुलकानी सों ।
“पूत तोहिं अछत, सरीर लखि आयो पास,
मेरे प्रान आए फेरि पलटि पयानी सों ।
तौऊ तुम माँगत बिदा हौ अतुराइ एतो,
ऊबे कहा मेरी यहि बिपति-कहानी सों । १।

‘ईश’ प्रिय दूत पूत तुमहिं असीस तजि,
और बकसीस हम देहिं का अभागी हौं ।
राघव बियोग योग तापित सँताप भरी,
असन जसन बेस बसन बिरागी हौं ।
जानी नहीं जात कौन अघ अपराधन तें,
योहीं बिनु साध स्वामि संग परित्यागी हौं ।
तौऊ पाइ दरस तिहारो उरधारो कपि,
बूढ़त बिरहसिधु धीर तट लागी हौं । २।

चाहत हौ जान तौ सुजान कपि मेरे कहे,
अधिक नहीं तौ द्वैक दिन ही इहाँ रहौ ।
तोहिं लखि जरनि जुड़ाति जिय अंतर की,
याते जाइबे को अबै चाव चित ना गहौ ।
रहि इत रच्छित अलच्छ गिरि कंदर मैं,
सोध बोध लेत देत जैसी सुबिधा लहौ ।
तब तुम जैयो लौटि पीतम पियारे पास,
पूत प्रिय बचन बिचारि मुख ‘हाँ’ कहौ । ३।

तेरे गए कीस भरि रीस दससीस स्त्रीस,
 दै दै कै कसीस जातुधान कुल कोही को ।
 भेजिहै सहायक बिहीन दोन मोपै रोज,
 सकल अनर्थन को मूल गुनि मोहीं को ।
 ते वै आय करिहैं अनेक उतपात घात,
 तात रुख लखिकै बिघातक बिछोही को ।
 तब पत रैहै किमि अपत भए पै फेरि,
 करिहौं कहा मैं प्रान राखि पति द्रोही को” ।४।

सुनि सिय बैन नैन नमित किए ही कपि,
 बोल्यो, “मैं न मातु कबौं बाहर तिहारे तैं ।
 मन बच करम अनन्य पद-सेवक हौं,
 करिहौं वहै जो आप कहिहैं इसारे तैं ।
 पर इक अरज हमारी है सुनौ जौ ताहि,
 उचित गुनौ जौ उर अंतर बिचारे ते ।
 तौ तौ देहु आयसु बिहाइ दीनता को तौर,
 सहि कलु द्यौस और हीनता लचारे तैं ।५।

ऊबे हम नाँहिं पर प्रभु की दसा को सोचि,
 अंब सहिजात ना बिलंब एक छन को ।
 चाहत यहै है चित्त अनुमति रावरी लै,
 झट पट जाऊँ रिष्यमूक गिरि बन को ।
 जाइ तित इत की, हकीकति सुनाइ उर,
 तोष सपजाइ हंस बंसी सश्रुहन को ।
 करि प्रभु काज कपिराज को निहोरो साजि,
 तब कल पैहौं बिसराम हेतु तन को” ।६।

सुनि कपि वचन, बिसूरि दृग पूरि भूरि,
बोली सिय हिय को दबावत उसाँस लेत ।
प्यारो पूत, तोहिं पाय कछुक सहारो भयो,
सोक बजमारो दैव निरखि निकासे लेत ।
अब फिरि ह्वैहै, सोई द्यौस और सोई राति,
साँसत सहत प्रिय रहित प्रबासै लेत ।
कौन बिधि जीवन बितैहौं अरि-भौन बसि,
कौन को चितैहौं, दुचितैहौं जब साँसै लेत । ७।

ऊबि ऊबि त्रासन ते उससि उसाँसन ते,
बिरह बिकासन ते लोचन लचारे ये ।
नीर बरसावत न पावत तनिक चैन,
उर अकुलावत दुसह दुख भारे ये ।
साँस बस अँटके निवास तन-पिंजर में,
दरसन आस बस तरसत तारे ये ।
राघव बिछोह छोह छकित बिमोह धारे,
कढ़त न पापी प्रान पामर हमारे ये । ८।

तोहिं लखि पावत अचैन दृग मेरे चैन,
याते कछु काल तौ रहौ जौ दूत आयो तू ।
नैकु तौ बताउ केहि तौर इकलोई पूत,
अमित अरातिन के दल मैं समायो तू ।
किमि करि नष्ट प्रमदाबन समष्ट फेरि,
कष्ट बिन कैसे गढ़ लंक को जरायो तू ।
बिस्व के बिजेतन को सुमनस-जेतन को,
कैसे रनखेत मैं खेलाय जय पायो तू" । ९।

“या मैं तो हमारौ कल्लु बिक्रम रह्यौ ना अंब,
 आपही के दारुन उसाँस बस छोजे ये ।
 राम रोस पावक जरायो गढ़ लंक अंक-
 बासी जीव अंकित उरेह सों उझीजे ये ।
 बहु दिन जात प्रमदावन बिटप जात,
 आपु ही गिरे ते मम बल साँ न गीजे ये ।
 हम तौ निमित्त बित-रहित भए ये आप,
 निज अघ ताप के उतापक पसीजे ये । १०।

तप बल अर्जित अनेक बलधारी रहे,
 जद्यपि अनेक दनुजात भयकारी ये ।
 पर परताप के अघौघ अनुतापन ते,
 आपै आप नसिगे दुरंत दुखकारी ये ।
 सत्वर असेस ह्वैहैं सेस जे बिसेस बचे,
 राघव सरानल मैं आधि अधिकारी ये ।
 छय पथ धारी जऊ जीवन सुभारी तऊ,
 सब सम आरी सार-रहित बिकारी ये । ११।

चिंति बल बिक्रम अचित रघु सत्तम को,
 तत्त मत्त छोड़िकै दयाद जे दनुज के ।
 भय ते भरेई रहैं भूरि निसि बासर ये,
 सोचि कृति कर्कस खरारि से मनुज के ।
 जानि जिय हानि सुख संपति समान प्रान,
 मोहबस औरौ निज तन औ तनुज के ।
 ब्याकुल लखात अति आकुल सकुल सेस,
 जे हैं बचे पुन्य-बल रावन अनुज के । १२।

जय की बँधी जो धाक पाकरिपु नायक की,
 आई तौन डौंकि धार पार या उदधि कै ।
 आइ इत सत्वर नसायो गढ़ गाढ़ औ,
 खसायो खल खेटन समूह साध सधिकै ।
 सोई धँसी उर मैं, समस्त दनुजातिन के,
 ते वै त्रास दैहैं कहा नाह नेह नधिकै ।
 पोंछु नैन नीरज न खोंछु अवनीरज को,
 धीरज न मोछु रहि अंतर परिधि के ।१३।

रंचक न सोचु इन बंचक बिचारन के,
 भारन बलित दोह दलित निकाया को ।
 झेलि बर बिपति सकेलि सुठि साहस को,
 अंत मैं न आनँद अपार मै अमाया को ।
 पतिव्रत पावन प्रताप ते तिहारे ताप,
 तापित उताप मैं न आया जग जाया को ।
 देहि अबिलंब अनुसासन बिदा को अंब,
 रेहि उर सासन सनेह रघुराया को” ।१४।

मारुति विनीत बैन सुनि सिय बोली, ‘पूत,
 एतो अतुराइ जान चाहत जु पै चले ।
 तौ तो जाहु सत्वर सुखेन हम देतीं कहे,
 उत जित कोसलकिसोर बिलसैं भले ।
 आइ तित इतकी सुनाइ दृग देखी दसा,
 कहियो बुझाइ जासों करुना बिसेस ले ।
 आवैं प्राननाथ रघुनाथ औधि अंतर ही,
 नातो प्रान पामर न रैहैं घट मैं घले ।१५।

दूरि है इहाँ ते खास बास रघुनायक को,
 सहज सुपास नाहिं जाइबो तहाँ को है ।
 जाइ तित खबरि जनाइ पाइ स्वामि रुख,
 कटक जुटाइबो नकारत न हाँ को है ।
 फेरि पहुँचाइबो अपार कपि बाहिनी को,
 सिंधु उपकूल मैं न कार तनहा को है ।
 बारिधि मझाइ, औधि अंतर इहाँ पै ल्याइ,
 हम सों मिलाइबो जुराव ही जहाँ को हैं । १६।

सुनि सिय बैन ह्वै अचैन कपि बोल्यो आसु,
 आयसु तिहारो पाइ स्रम सियरैहाँ ना ।
 कूदि सैल सिखर अरिष्ट ते उछरि अंब,
 सुंदर पै टिकत बिलंब उर लैहाँ ना ।
 राघव प्रताप औ तिहारे अनुताप बल,
 सागर को गागर प्रमान ठहरैहाँ ना ।
 जौ लौं नहि ल्यावत इहाँ पै रघुनायक को,
 तौ लौं पदपायक तिहारो कहवैहाँ ना । १७।

कठिन कछू ना है तिहारे पूत पायक को,
 बूत है अकूत घोर राघव प्रताप को ।
 चाहै तौ उखारि कै त्रिकूट नग मूल सह,
 धारि कर धावै छरा छोर छुइ छाप को ।
 संभव असंभव को करत न मानै स्रम,
 आनै ना हिण मैं भ्रम तम के कलाप को ।
 पर परताप को न ताप उर जानै तेतो,
 जेतो गुनै ताप माँ ! तिहारे अनुताप को । १८।

योग बस आकुल बियोग रघु पुंगव को,
सक्य भरि सत्वर सुनाइ सुधि साँवरी ।
ल्यायो चहौं सपदि ससैन्य यहि ठौर लागि,
याही ते करत अंब एतिक उतावरी ।
एक मास ही की दियो अवधि हमैं है आप,
ताहू मैं बितीती एक चाहत बिभावरी ।
दीजै अबिलंब अंब “ईश” अवलंब हित,
प्रिय पहिचानी को निसानी कछु रावरी ।१९।

तड़ित प्रमान मनि फनिसों निकारि नीके,
हाथ धरि कपि के अनाथ इव रोय रोय ।
बोलीं सीय, “लखन समेत रघुनंदन के,
बंदन करत पग कहियो प्रनत होय ।
आपके रहत एती सहत बियोग ताप,
करुना कलाप रावरे की कित बैठी गोय ।
दीनबंधु प्यारो दीनबंधुता बिसारो जनि,
इबत उबारो बर विरद सँभारो जोय ।२०।

दैकै नाथ हाथ मैं निसानी मनमानी सोचि,
सक सुत करम कहानी कहि जाइयो ।
फेरि सीक सायक प्रताप समुझाइ आप,
दाप दसकंध को बढ़ानी कहि जाइयो ।
प्रभु के प्रछन्न तप अर्जित बरछन की,
लोकन मैं प्रभुता प्रमानी कहि जाइयो ।
तब मम दारुन बिथा की कथा कोरि कोरि,
जोरि जोरि जाहिर जबानी कहि जाइयो ।२१।

पूछि हैं रहति कैसे कहियो बुझाइ मन,
 ध्यान मैं तिहारे ग्यान मान तैं बिरत है ।
 छुधा को अधार औ अहार अँसुवा को करि,
 आस बस साँस के सुमार मैं भिरत है ।
 अंतर मैं निहित निरंतर तिहारी ज्योति,
 ताही मैं समाइ थिति पाइ यों थिरत है ।
 सुरभि सजाइ साजि सहज समाधि तेरे,
 पूत पाद पंकज पराग मैं निरत है । २२।

तन को न जानै ताप ताहि नासमानो मानि,
 फेरि सो हकीकति बताइबो अवस है ।
 मन पद चिंतन मैं संतत निरत ताहि,
 विघन हटावत बिसेष बरबस है ।
 तौऊ अभिलाख एक लाख लाख भाँतिन सों,
 उर मैं उरेखो सो बिसेखिबो अवस है ।
 अंतर मैं लखत निरंतर रहे ही पर,
 प्रगट परेखिबे की हिय मैं हवस है । २३।

सुनि मम दारुन बिथा की कथा तथ्य रूप,
 हैहैं द्रुत द्रवित दयालु मो विपद पै ।
 ऐहैं संग लखन अपार कपि बाहिनी लै,
 चढ़ि गढ़ गूढ़ बंक लंक जनपद पै ।
 पर यदि आवत अबेर कछु है है फेरि,
 बोलत अवधि प्रान रैहै ना स्वपद पै ।
 तन तजि जैहै नेह नाह को निबैहै,
 परी देह रहि जैहै इतै प्यारे के सुपद पै" । २४।

षष्ठ सर्ग

कान करि नोके, मिथिलेस नंदिनी के बैन,
देव बंदिनी के बंदि पद जल जात को ।
सहित निसानी जातुधानिन लखत कूदि,
नखत पथी है गहे गति बर बात को ।
आयो पल मारत अरिस्ट गिरि ऊपर,
परत पग भूपर सकोचि द्रिढ़ गात को ।
उछरि अकास पथ पकरि पधाख्यो बीर,
नंदन समीर प्रभु पद प्रनिपात को । २५।

गगन मगन है ओज सह, गोगन भख्यो हुलास ।
लगन लगाए हरि चलयो सगन सहायक पास । २६।

इति श्री लंका-दहन काव्ये अग्नि-प्रत्यागमनो नामकः

षष्ठः सर्गः

सप्तम सर्ग

पावक प्रत्यागम

राम पद पूत को उपासक प्रसिद्ध, सिद्ध-
काम गुन धाम छिति छोर सों छलकि कै ।
पकरि अकास पथ प्रभु के सकास जाइबे-
को अवकास पाइ लीला सों ललकि कै ।
बात गति धारि बातजात पौरि पार चलयौ,
दनुज दुरातिन के द्रोह सों दलकि कै ।
सोध लै सिया को अनुरोध लै प्रिया को,
बहु बोध लै जिया को जात बल सों बलकि कै । १।

पारावार पार करिबे के हित पौनपूत,
पच्छवान पर्वत प्रमान मान धरिकै ।
उछरि अकास-पथ पकरि प्रवेस करि,
गगन समुद्र को निरेख्यो नैन भरिकै ।
देख्यो, नील सलिल समान नभ सोहै भलो,
फैल्यो आस पास तर ऊपर सँभरि कै ।
बिहद बिभात हृद हेरत हेरात मन,
तौऊ ना थिरात पार पावै कौन तरिकै । २।

पन्नग उरग जच्छ, चारन गँधर्व सर्व,
एई जल जन्तु लौं लखात सुखमा भरे ।
नखत समूह, ग्रह उपग्रह व्यूह तेई,
द्वीप लौं दिखात उतरात चहुँघा परे ।
मंभावात भीखन तरंग प्रति घात पूर,
फेन लौं फिरत फैलि बादर दरे दरे ।
देसे नभ नीरधि को मथत मथानी बीच,
मंदर समान बीर बंदर हरे हरे । ३।

बीर हनुमान मनमान जवमान जात,
 पान सों करत अंतरिच्छ अनुमान होत ।
 आवत खिंचे से गति बेग के प्रवेग बस,
 तारन के जूह ग्रह गूह यह ग्यान होत ।
 बार बार अभ्र उर अंतर प्रबिसि कढ़ि,
 दुरत दिखात भोर भानु इव भान होत ।
 घिरि घिरि उघरि घनेरी घनरासि बीच,
 भासै धवलांबर सुधाधर समान होत । ४ ।

गाहत गगन मग मगन घनाली बीच,
 बिजु के बिभा मैं कहूँ सुखवि भला का सों ।
 बोध होत नील नभ नीरद निकेत मध्य,
 तिरत सहेत कपि बिसद बलाका सों ।
 लसत अदभ्र अभ्र अंतर उदोत होत,
 बनक बनोत बेस कनक सलाका सों ।
 माहिर मनात, धूम धार बदरा मैं ढँक्यो,
 बाहिर जनात हरि जाहिर जलाका सों । ५ ।

चढ़ि नभ ऊपर निहारयो कपि नीचे जबै,
 देख्यो जलनिधि की अगाध जलधारा को ।
 वार पार रहित अपार बेसुमार भौर,
 भ्रमत दिखात पाइ पौन के सहारा को ।
 भीखन तरंगन के घात प्रतिघातन सों,
 उठत हिलोर सोर करिकै करारा को ।
 फेनिल फिरत फैलि फैलत थिरत नाहिं,
 फफकत फूलि फूलि, फँकत फुहारा को । ६ ।

मंभावात भहरि भकोरि जल-रासिन को,
 उथल पथल कै थिरावत न थाह लेत ।
 भीमाकार भीखन तरंग तुंग जंग जोरि,
 एकन पै एक परि पूरत प्रवाह लेत ।
 बीच बीच बीचिनि के भ्रमत भँवर भूरि,
 फेनिल है बुदबुद बटोरि निज राह लेत ।
 ऊर्मिमाल घूमि घूमि चक्रजाल जोरत औ,
 छोड़त उछास मानो ऊबि ऊबि आह लेत ।७।

पारावार पूरन अपार करुनाकर के,
 करुना-प्रसार को सँभार दिखराई देत ।
 गाइ गाइ तुमुल तरंगन के ढंग गुन,
 वाके अनुराग को सुराग सिखराई देत ।
 लै लै लोल लहर बिराट पग धोवन को,
 चाहत न पाइ है निरास निखराई देत ।
 चेतन की याद मैं अचेतन भए हू चेति,
 कन कन रतन समूह बिलराई देत ।८।

याद करि अब लौं स्वकीय महदीयता को,
 मानि मरजाद बाद करत बबेला को ।
 राखि उर अपने प्रदाह बड़वानल को,
 दाहन दहत पै न गहत भमेला को ।
 नक्र ग्राह मकर तिमिंगल भखादि कुल,
 संकुल बिसाल व्याल बालन के रेला को ।
 सहत निरंतर अतूल सूल अंतर मैं,
 त्यागत न तौऊ सरनागत रखेला को ।९।

बारिधि विधान की बिसेसता बिसेस जानि,
मानि मन महत महान की महत्ता को ।
पुलकि प्रनाम करि प्रभु के प्रभावन के,
भावन भभरि भूरि भूलि बलवत्ता को ।
देख्यो सब थल जल अनिल अनल हूँ मैं,
नभ मैं नियुज्यमान वाकी दृढ़ सत्ता को ।
पायो बर बांध पथ सोध मैं समायो अतु-
रायो कै निरोध चित्तावृत्ति की इयत्ता को । १०।

कपि गति बेग के प्रबेग बस जूटि जूटि,
दूटि दूटि नखत निखूट निखरै लगै ।
केते दृढ़ देह के दरेरे दरि दूर हैं हैं,
केते बनि चूर भरपूर बिखरै लगै ।
केते परि भोंक मैं रसातल रमत दीखे,
केते रोक टोक मैं त्रिलोक सिखरै लगे ।
केते खंड खंड हैं प्रचंड भुजदंडन सों,
चींटी-अंड-भंड कै समान दिखरै लगे । ११।

योंहीं बैनतेय लौं बिकासत स्वबिक्रम,
क्रमै ही क्रम करत अभिक्रम को उप्रतर ।
जात मेघ बृंदन बिदारत सु बार बार,
दारत दिसा को बल धारत अकूत बर ।
देख्यो दूर ही तैं अति सुंदर महेंद्र नग,
सिखर समूह चाँदनी मैं चाहि चारुतर ।
जान्यो रजताचल चलाचल अचल हैंकै,
राजत उमगि अगवानी हेतु तीर पर । १२।

इंद्र नग सिखर निहारि काननारि पथ,
 जोहत निहारि अंगदादि कपिबर को ।
 कीन्हो बज्रनाद को निनाद किलकारि निज,
 आगमन सूचक सुधारि दृढ़ स्वर को ।
 सुनत हहाइ धाइ धाइ गिरि-स्निगन पै,
 चढ़ि चढ़ि टेक दै दै गूढ़ दृढ़ कर को ।
 हरखि हितौन लागे आनंद रितौन लागे,
 चकित चितौन लागे चाहि चाहि चर को । १३।

तौ लौं किलकारत सुजोम सों जोहारत,
 सँभारत स्ववेग को हरेई हरे घूमि घूमि ।
 आयो कढ़ि बादर दरी ते केसरी ते बढ़ि,
 केसरी किसोर कूचो हर गिरि दूमि दूमि ।
 धमकनि इंद्र नग मसकि मही मैं मिल्यो,
 तटवारे बिटप भकोरै लगे मूमि मूमि ।
 धसकि धराहू अधरा सों मिली अंबुधि के,
 अंबुधि छरा है लग्यौ उछरन चूमि चूमि । १४।

गावै लगे बिहँग-समूह गान स्वागत को,
 आगत उषा को चाहि चाव चित मैं चढ़यो ।
 बिहँसन लागी दिसा अंबर अरुन साजि,
 अरुन हितैसिन के मोद मन मैं मढ़यो ।
 सुमन समूह लागे बिकसन मोद पाइ,
 सीतल समीर गति धीर धरिकै बढ़यो ।
 पेखत प्रभान सिद्ध काम गुरु सिस्य मान,
 एकै संग भानु हनुमान दिसि तैं कढ़यो । १५।

देखि दूरही तैं दौरि दौरि द्रुत आए सबै,
कूदि कूदि कूटन तैं आनँद अटूट भरि ।
जामवंत, अंगद, मयंद, नल, नील आदि,
जूथप समूह कपि जूह अतुराई करि ।
उत्सुक हिए तैं देखिवे के हित प्रानप्रिय,
जीवन रखैया औ सहैया साँकरे को अरि ।
केसरी किसोरै घेरि घेरि चहुँ ओरै परि,
प्रेम के हिलोरै लगे भेंटन सबै ही धरि । १६।

चाव सों चितैकै उर आनँद रितैकै अति,
हेत सों हितैकै रिच्छनाथ हाथ गहिकै ।
पूछ्यो “बलधाम हौ जनात सिद्धकाम,
तव बदन ललाम जात बिकस्यौ उमहि कै ।
कहु केहि ब्याज करि आए प्रभु काज सत-
जोजन दराज सिंधु लाँघि बेग बहिकै ।
पायो कहाँ सी को लखि बदनससी को बनि,
रूप सुजसी को लौटि आए लाह लहि कै” । १७।

पूजित है सादर सनेह सहबंधुन सों,
गंधवाहनंदन अनंदन अजैया को ।
बोल्थो जांबवानहिं सँबोधन करत बर-
बोधन करत अंगदादि कपि रैया को ।
“हेरि हम आए निज नैनन बिखाद भरी,
मूरति बिसूरति न पूरति सहैया को ।
बैठी आसुरीन के समूह मैं अधीना छवि-
छीना दीन हीना रघुराज की लुगैया को । १८

चलहु सबै मिलिकै तुरत, पहुँचि सामुहैं नाथ
 तब कहिहौं इतिवृत्त सब सबही सों इक साथ” ॥१९॥
 सुनि समीरसुत के बचन जामवंत गहि हाथ ।
 कह्यौ “कहौ हमसों प्रथम तितको सबही गाथ ॥२०॥
 सुनि संमत करि जो उचित है सोइ वृत्तांत ।
 कह्यो जायगो नाथ सों सब तजि निपट नितान्त” ॥२१॥
 समयोचित रिच्छेस के सुनत नीतिमय बैन ।
 “साधु ! साधु” सबही कह्यो हुलसौहैं करि नैन ॥२२॥
 बैठ सिला तल पै स्वबिच मारुत सुतहिं बिठाय ।
 पूछन लागे प्रेम सों सुनिबे हित अकुलाय ॥२३॥
 इति श्री लंकादहन काव्ये पावक-प्रत्यागमन नामकः

सप्तमः सर्गः

अष्टम सर्ग

प्रमोद-प्रसरण

लक्खन लाड़िले के बर बंधु को,
दूत न कूत है जा बल बून को ।
सासक सारे अरातिन को,
गति नासक सिंहिका के छल छून को ।
पायक श्री कपिनायक को,
अरु साँचो सहायक जो पुरहून को ।
सो सुनि रिच्छप को कहिबो,
लहि बोध गह्यो निज छाव बिधून को । १ ।

बोलि उठ्यो भट बालितनै,
“बर बीर तिनै सुनौ बेर न लावो ।
हौ जब ते सब ते बिछुरे,
तब ते की कथा कहि बेगि सुनावो ।
या बिधि सों नहिं होत सँतोख,
मिलै जिमि तोख सोई गति गावो ।
नाँव औ गाँव को ठाँव ठिकाई,
गए किमि सो बलि जाउँ बतावो” । २ ।

यों सुनि अंगद को कहिबो, गहि
बोध जथारथ सोध कथा को ।
लाग्यो कहै कपिराय सुनाय,
जनाइबे के हित जोग जथा को ।
“पाइकै भायसु रावरे को अति,
चावरे सों तजि पूर बिथा को ।
हौ चलयौ बारिधि के पर पार,
सँभारत तात के पूत पथा को । ३ ।

बारिधि के तट एक उतंग,
 लख्यो गिरि स्निग्ध उमंग सों तापै ।
 कूदि चढ़थो मन मोद मढ़थो,
 बढ़थो मेरु प्रमान अमान ह्वै आपै ।
 इच्छित काज विचारि हिए,
 रहि रच्छित श्री रघुबीर प्रतापै ।
 हौं उछरथौ छिति ते नभ पै
 द्रुत धाइ चल्यो गहिकै दृढ़ दापै । ४ ।

लै पथ सिद्ध औ चारन को,
 गहि कारन सोध को बोध भरो अति ।
 धाइ चल्यो द्रुत कंपित कै दिसि,
 दच्छिन को गहिकै मन की गति ।
 रोके मिली मग नागन की,
 जननी सुरसा उर साधु सुभा मति ।
 ताहि प्रबोधि जथा-विधि सों,
 लहि आयसु तासु चल्यो बिनहीं छति । ५ ।

बारिधि-वासिनि छाँह को ग्रासिनि,
 त्रासिनि सिंहिका की लखि माया ।
 ताहि निपाति पिता हित मीत,
 मनीसी महा मयनाक की दाया ।
 देखि प्रतोखि कै ताहि सराहि,
 त्वराहि त्रिकूट तटै नियराया ।
 या विधि सों गढ़ लंक लौं जाइ,
 सजाय कै स्वल्प कियो निज काया । ६ ।

भृंग लौं स्निग त्रिकूट पै जाइ,
 स्व पिंग बिलोचन को करि आयत ।
 हेख्यो हिरन्मय कोट प्रकोट,
 अखोट जहाँ मनि की बहुतायत ।
 चित्र बिचित्र जड़ाई जड़ी,
 नहिं पाई कहूँ लखि कैफ किफायत ।
 भासत भानु प्रभा सों मढ़ी,
 गढ़ लंक के अंक मैं पंक लगायत । ७ ।

खाई हैं सिंधु गँभीर बन्यो,
 फिरि कूट ते कोट लौं हाटक कोट है ।
 उच्चता मैं कलसे गढ़ लंक के,
 बादर अंक हू मैं करैं चोट है ।
 जाके समान नहीं अलका,
 अमरावती की गिनती अति छोट है ।
 दीपति जाकी दिपै दिसि मैं,
 मनोभानु की भा यहाँ पै लहालोट है । ८ ।

ताके अनेक पताके लसैं अति,
 ऊँचे धुजान के दंड मैं पोहे ।
 रंग बिरंग के केतिक ढंग के,
 हेरत ही मन लेत हैं मोहे ।
 रंच समीर लगे लहरैं,
 फहरैं अँटि अंबर मैं रुचिरोहे ।
 मानो मना करैं दूर ही ते,
 इत आउ न यों बिमुखीन को जोहे । ९ ।

कौन कहै किते भौन बने,
 जिनमें घुसि पौन रुकै कबहूँ ना ।
 कोठा अटारिन की भरमार,
 सुमार कै पायो हिए अबहूँ ना ।
 जात जितै हो तितै ठिठकी रहै,
 दोठि अनीठि फिरै तबहूँ ना ।
 जेती लखी सुघराई तितै,
 लखि पाई पै पाई कही सबहू ना । १०।

बाग बगीचे घने बन की,
 बहुलाई लखाई परी चहुँ ओरैं ।
 बापिका कूप तड़ाग सरोवर,
 को बरनै जिते हैं तेहि ठौरैं ।
 बीथिका बीथी सभी थीं सिंचीं,
 नहिं थीं तौ कहूँ रज की भकभोरैं ।
 चोरै चहुँ गुलजार बजार की,
 सोभा अपार चितै 'बरजोरैं । ११ ।

दौरत देखे दिमाक दुरे,
 दिकपालन को दसमाथ दुवारै ।
 काल हू ते प्रबली अँटिया सों,
 बँधे पटिया सों लखात लचारै ।
 बेदी बिधान बताइबे को,
 बिधि हू बिबसै से रहैं मन मारे ।
 छोड़ि सबै फरफंदी बृहस्पति,
 बंदो लौं गायौ करैं जस हारे । १२।

वीरन की भरी भीर भ्रमै गिरि-
 स्त्रिंग सो ऊँचे मतंग से कारे ।
 बज्र हू ते दृढ़ अंग उमंग मैं,
 जंग मैं दीसै महा बलवारे ।
 सूल गदा असि पट्टिस पास,
 अनेक तरास के आयुध धारे ।
 यारन की ना सुमार जहाँ,
 हथियारन की कहै को निरुआरे । १३।

ओपतीं तोपैं सफीलन पै गँजे,
 गोले बिनौले समान सबै थर ।
 बाजि रथादि पदातिन की गिनती,
 ना तिती जितनी हैं तहाँ पर ।
 वारन और सवारन की भरमार,
 भरी हथियार धरे कर ।
 रच्छित ऐसी न गच्छित है सकैं,
 जामैं अधच्छित बैरिन के चर । १४।

ऐसी सुरच्छित हेरि पुरो हौं,
 अलच्छित है मन माँहि बिचाख्यो ।
 यामैं प्रवेस प्रकास मैं नाहिं,
 निकास अँधेरेई मैं निरधाख्यो ।
 आगम सोचि निसागम जानि,
 समागम ते बचिबो अनुसाख्यो ।
 याही कसाकसी के अरसा महँ,
 हैकै मसा सम हौं पगु धारयो । १५।

कोट तैं हँकै घुस्यो पुर मैं,
 उर मैं न कछू भय को भ्रम राख्यो ।
 एतेई मैं अनईछे कोऊ,
 मम पोछे ते ककंस रूप यों भाख्यो ।
 'को है तू चोर ते जोर चलयौ,
 कितै जात है तू मरिबो अभिलाख्यो ।
 हौं भखिहौं चखिहौं पल मैं पल,
 तेरो अरे, सुनिहौं मन माख्यो' । १६।

धूमिकै हेज्यो महाबिकटा चिकटा सी,
 चली इक राच्छसी आवत ।
 देखि रुक्यो कह्यो 'कौन है तू,'
 कह्यौ 'तू उलटै हमैं आँखि दिखावत ।
 जानत ना परतच्छ पुरी हौं,
 कुरीति सों जो यहि मैं घुसि आवत ।
 सो तो हमारो अहार है,' यों
 कहिकै बड़ी लंकिनी नाम सुनावत । १७।

हौं गुन्यो है यह बिघ्न स्वरूप,
 बिरूप बनाइबो है बिधि याको ।
 सोचि यों एक चपेटिकाघात,
 कियो मुख मैं बध त्याग तिया को ।
 स्रोनित फेंकत भूमि गिरी,
 वह होस रह्यो नहिं जोस जिग्या को ।
 किंचित बार मैं चेत सँभारि,
 उठी बल धारि सुधारि धिया को । १८।

बोली 'अहो कपिराज सुनो,
जब दीन्ह्यौ दसानन को बिधि नै बर ।
जात समैं हमैं हेरि कह्यो,
अरे लंकिनीतू है निसंकिनी या थर ।
पै जब हैहै अधीर महा,
लहिकै गुरु घात बलीमुख के कर ।
जानियो हैहैं बिनास सबै,
तब बासी बिसेस असेस निसाचर । १९।

सो हम जान लियो निहचै अब,
सारे अरातिन के सुख रीते ।
पापी सुरापी दसानन के,
अब आनन फानन में दिन बीते ।
जाहु सुखेन करौ प्रभु काज,
भरौ निज बैरिन के मुख तीते ।
आसिस देति हौं कीस तजो भ्रम,
रीसति ना हौं असीसति जी ते' । २०।

तौ लगि अंबर अंक के पंक में,
पंकज रूप मयंक उदै भो ।
केसरि लौं बिखराइ मयूख,
पराग लौं पोखि पियूख मुदै भो ।
चाँदनी को छहराइ धरा धरि,
गंध को पूरि प्रबंध जुदै भो ।
जोहन को जगती तल के,
गिरि गोहन मोहन रूप खुदै भो । २१।

भासत मानो पयोदधि सों,
 सधिकै नवनीत को लुंद जुदै भो ।
 कै सुठि अमृत बल्लरी को फल,
 टूटि नभस्थल मैं समुदै भो ।
 कै बर मन्मथ को रथ चाक,
 चिराक निसा जुवती को खुदै भो ।
 नंदन चारु चकोरन को,
 द्विजवृंद अनंदन चंद उदै भो । २२।

पाइ प्रवेस निदेस बिसेस,
 सुरेस की सत्रुपुरी महँ हौं बढि ।
 लाग्यो भ्रमै प्रति मंदिर मंदिर,
 अंदर ते फिरि बाहर लौं कढ़ि ।
 देखे असंख्यन जोधे तहाँ,
 पथ रोधे तऊ मन मैं निहचै नढ़ि ।
 खोज्यो भली बिधि पै न लही सिधि,
 यातैं गयो मन मोह महा मढ़ि । २३।

फेरि बिचारि प्रधान प्रधान,
 निसाँकन के गृह अंक निबेखो ।
 बारिदनाद महोदर अच्छ,
 कुभच्छ घटास्रति को घर घेरयो ।
 जानुनमाली सुमाली प्रहस्त,
 समस्त के रच्छित कच्छ मैं हेखो ।
 किंकर आदि के आलय बीच,
 बिसोधक दीठि सुनीठि कै फेखो । २४।

या बिधि सों सब ओर निरेखत,
 पेखत राजदुवार लौं आयो ।
 तामैं प्रवेस कै चाहि चितै,
 चित चक्रित ह्वै अतिसै भरमायो ।
 ऐसो बिचित्र न चित्रित ह्वै सकै,
 ताकी बिचित्रता हेरि हिराया ।
 पै तितहू अनुसोध कियो,
 पर जानकी को कछु सोध न पायो ।२५।

चाँदनी के परकास मैं खास,
 सकास ही राज निवास के पावन ।
 आठहू जाम अराम को धाम,
 लख्यो गृहाराम सु एक सुहावन ।
 सोन की चार दिवारी घिरी,
 जेहि के चहुँ ओर महा मनभावन ।
 नंदन हू तैं अनंदन बार,
 बिहार करै नित ही जित रावन ।२६।

कूदिकै कंचन कोट चढ़यो,
 चढ़िकै तित संयत ह्वै चाहि चाव सों ।
 देखन लाग्यो छटा छिटकी,
 प्रमदाटवी की बसिकै तेहि ठाँव सों ।
 ताकी बड़ाई कहाँ लौं करौं,
 नित जाकी सफाई सिंचाई सु ताव सों ।
 चाली सुरेस बहाली भयो,
 रखवाली करै बनमाली सु ताव सों ।२७।

तामैं प्रवेस कै देख्यौ चहुँ,
 कहूँ रंचक हू त्रुटि पाई न तामैं ।
 भोर ते साँझ लौं भानुप्रभा,
 न उतापन तापि सकैं घुसि जामैं ।
 पन्नन की सजी क्यारी भली,
 लगी मानिक गोट अगोट ललामैं ।
 हीरन की रविसैं रवि सै करैं,
 होड़ न जोड़ लख्यो बसुधा मैं । २८।

पंथ प्रवाल को लाल ही लाल,
 जमाल सों जो अपने मन मोहत ।
 गैल बने पुखराज के जामैं,
 न मैल समात समा सजि सोहत ।
 प्राकृत सैल खड़े जिन ते,
 भरने भरि मीलन को तन पोहत ।
 केलि के कुंज निकुंज के पुंज,
 जहाँ तहाँ स्वागत को मग जोहत । २९।

ठावँ ही ठावँ प्रदीप सों दीपित,
 सीप ही की सुबुकी बनी नावैं ।
 केते कितान की तान बितान की,
 ते मुक्तान की भूषित भावैं ।
 सोहैं सजी सरसी मैं रसी,
 अरसी सी लसी सुखमा सरसावैं ।
 बारहिं बार बिहार करै हित,
 दर्सक बृंदन को ललचावैं । ३०।

ताल तमाल हिंताल रसाल,
निहाल बने जल जाल सों सींचे ।
जंबु औ निंब कदंब के जूइ,
समूह लगे बिलगे न नगीचे ।
दाख के औ कचनार अनार के,
केते प्रकार के बीरुध बीचे ।
फूले फरे दरसात दरे दरे,
हेरे हरे हरे ऊपर नीचे ।३१।

जेते सुवास के खास प्रसून,
सबै तहँ पास ही पास निहारे ।
रैनि मैं ते ससि के निरसे,
बिकसे बर देत सुगंध पसारे ।
चारि हूँ कोद अमोद महा मन,
मोद भरै स्रम देत निवारे ।
मानस तौ प्रमदा कुल होत,
सु या प्रमदावन मैं पगु धारे ।३२।

सीत-प्रधान प्रदेसन के,
बिरवा बहु बेस सुदेस सजाए ।
जो न सकै सहि रंचक ताप,
उताप लगे नसि जात सुभाए ।
ताकी सु आँच बचाइवे को,
बहु काँच के साँचे हरे गृह छाए ।
जामैं प्रवेस न पाइ सकै, दिन-
मैं रबि की किरनैं कोउ भाए ।३३।

पंथ प्रवेस के पास ही पास,
 निकास चतुष्पथ के समुहारे ।
 एक सुमार मैं एक कतार मैं,
 केतिक तार के फैलि फुहारे ।
 छूटि फिरैं फिरकी से चढ़ै-
 नभ घूमि गिरैं भार के अनुहारे ।
 मानो करै महि मेह सों होइ,
 सुनेह सों जीवन देति जुहारे । ३४।

पाइ निदेस निसाँक नरेस को,
 पौन हू गौन करै यहि भावै ।
 जाते सु या प्रमदावन की,
 कहूँ एक हू पाती न टूटन पावै ।
 ताहू पै रोज बुहारी कखो करै,
 आरी भयो उर मैं अकुलावै ।
 पै तप अर्जित तेज के तापन,
 तापित ह्वै बन्यो भीरु सुभावै । ३५।

वा प्रमदावन की सुखमा,
 सुखमानस मैं जेहिके रमि रहै ।
 सो निरखे ही मदान्वित ह्वै,
 मदनान्वित मोद घनो दिखरैहै ।
 जाको रह्यौ चित दोचित ह्वै,
 तेहि रोचित हू तौ अरोचित ह्वैहै ।
 मो चित जानकी सोध मैं सोचित,
 मोहिं सुखोचित का सुख देहै । ३६।

सोध न पाई कहूँ सिय की, जिय की,
बिथा काह कहूँ केहि सो हौं ।
भूलि गयो अपने को मनै, न,
रही सुधि हू कि कितै अहाँ, को हौं ।
सोचन लाग्यो कि सेस रह्यो कहा,
बास बिसेस कि जाहि हौं जो हौं ।
खोजाँ कितै रघुबीर प्रिया जेहि,
खोज को ओजि हनोज चलो हौं । ३७।

योंहीं बिचारत औ पदचारत,
जात चल्यो दुख दाह दह्यो हौं ।
तौ लगि हेरथो महीरुह एक,
असोक को जा लखि मोह मढ्यो हौं ।
ताके तरे बहु राच्छसी बृंद,
अनंदित बैठी बिलोकि बढ्यो हौं ।
सोह बिषाद की मूरति सी,
तिनके बिच जानकी जोहि जढ्यो हौं । ३८।

धारे मलीन पटै परिधान,
वियोग बिधान रह्यो निखराई ।
धूरि धुरेटे महा क्रिस गात,
जनात जटा की जुटी सिखराई ।
आनन अंबुज सूखि रह्यो, तन,
भूखि रह्यो रज की रुखराई ।
नीरज नैन अचैन भए,
अँसुवा ते भरेई परे दिखराई । ३९।

सत्यवती कुल कामिनी लोक-
 ललामिनी मंजु कलामिनी स्यामा ।
 पुन्य प्रकासिनी आनंद रासिनी,
 राघव अंक बिलासिनी बामा ।
 काल छुरी दसकंधर की,
 बिछुरी प्रिय प्रीतम सों छबि छामा ।
 भीरु सुभाव तैं मूरति सी बनि,
 बैठी बिसूरति है निसि यामा ।४०।

तापै सँतापी दसानन सों अनु-
 जोजित दानव जाति की जाया ।
 लै बहुरूप मनोमत मंद,
 छकावती छवै छल छंद की छाया ।
 त्रासती कोऊ महा कुटिला,
 कपटी विकटाकृति क्रूरिणी काया ।
 कोऊ प्रलोभन दै दै भुलावतीं,
 जानि कै जी मैं महा असहाया ।४१।

ज्यों हरिनीन के भुंड परी,
 हरिनी अकुलाइ रहै निरुपाया ।
 कै रतिवाली मराली परी,
 बधिकावली के कर मैं असहाया ।
 लाजमई सुख साजमई
 रघुराजमई महिमामई माया ।
 त्यों रकसीन के बीच फँसी,
 बिबसी सी बसी जगदीस की जाया ।४२।

दीन भई छवि छीन भई,
 औ अधीन भई रकसीन के ऐसी ।
 पै निज पूत पतिव्रत के बल,
 आपु ही आपु सुरच्छित दै हैसी ।
 देखि दुखी भयो हौं अतिसै,
 कुरुषी भयो पै तजि बानि अनैसी ।
 जाइ असोक के ओक मैं बैठि,
 ससोक लखै लग्यो होति है कैसी ।४३।

या बिच राजनिवास के पास तैं,
 किंकिनी की कनि नूपुर की धुनि ।
 कान परी अरु जानि परी जुरि,
 आवती हैं कछु बाल इतै गुनि ।
 हौं उचक्यो चक्यो चक्रित ह्वै,
 चह्यो एतेई मैं पग चाप परी सुनि ।
 तौ लगि रावन को निरख्यो,
 इत आवत नारिन मैं निखरयो पुनि ।४४।

हौं अकुलाय, भुलाय कै सो बपु,
 आपुनो रूप तुलाय कै छोटी ।
 लाग्यो लखै पतियान के ओटन,
 कै छतिया द्रिढ़ औ मन मोटी ।
 देख्यो प्रतच्छ समच्छ ही आवत,
 पास अधच्छित खेचर खोटी ।
 देखिबे को अनइच्छित काज,
 अलच्छित इच्छित कै रुचि पोटी ।४५।

पूर्ण मदा प्रमदा जुवतीन के,
 संग उमंग सों ढंग कै औरै ।
 आसव रंग छक्यो अंग अंग सों,
 जाहिर होत अनंग को तौरै ।
 प्रेम की तुंग तरंगनि में तरि,
 तीर न पावत भावत भौरै ।
 दाँवत मत्त मतंग सों आवत,
 नावत बेढब सों पग ठौरै । ४६।

आवत देखि निसाचरनाथ को,
 यों जुवतीन के साथ मैं सीता ।
 काँपि उठी भुकि भाँपि भुजान सों,
 पीन पयोधरै पूत प्रतीता ।
 आकुल हूँ चहुँ ओर चितै,
 न हितै लखि पास निरास हूँ नीता ।
 बारहिं बार उसाँस लै आँसु,
 बिमोचति लोचन सों अति भीता । ४७।

देखि दसानन आनन फानन,
 आइ कछू नियराइ नगीचे ।
 माथ नवाइ कियो प्रनिपात,
 परेई परयो पग पै द्विग मीचे ।
 फेरि उछ्यो उठिकै ठिठक्यो,
 ठमक्यो करजोरि कह्यो सुर ईचे ।
 प्रानप्रिये केहि हेतु न देखति,
 मों दिसि है अवरेखति नीचे । ४८।

दीठि अनोठि सनेह सनी सुठि,
जौ कहूँ एक हू बार दया करि ।
मो दिसि डारि उवारि कै डूबत,
पार उतारि दै नैकु मया करि ।
तौ इन भामिनी बृंदन को,
अनुगामिनी तेरी बनाइ हया करि ।
सेवौ सदा पद पद्म ही को सुख,
सद्म सुमार कै नेह नया करि । ४९।

मानिहै जौ नहि मेरी कही,
जिय जानिहै जीवन है जुग मास को ।
बीतति औधि के रीतिहै आयु,
गतायु हूँ का फल पैहै बिसास को ।
खोजिहैं केतो तेरे हितमीत,
न पैहैं अचीत पतो या प्रवास को ।
याही तें तोहि बुझावति भामिनी,
छोड़ि दै जी की रही सही आस को । ५०।

याँ सुनिकै बच खोट के चोट तैं,
आकुल हूँ गहि ओट तिनै को ।
मानिकै ताहि तृनोपम तुच्छ,
कह्यो मिथिलेसजा त्यागि बिनै को ।
रे सठ बंचक चोर छिछोर,
बिसेसन तेरे अथोर गिनै को ।
तेरी बिसाति है केती कुजाति,
जो तू करै मोपै अनीति छिनै को । ५१।

जौ करिहै तू अनीति कछू तौ,
 प्रतीति कै राखु जिये जरि जैहै ।
 मेरे अखंड सतीत्व प्रताप के,
 ताप ही ते खर सों बरि जैहै ।
 सेस न रहै बिसेस कछू,
 मद गर्व को तेरे सबै गरि जैहै ।
 पाप की तेरे धरी गगरी,
 सगरी अगरी ही ढरी भरि जैहै । ५२।

जानत ना सठ सिंहबधू कहुँ,
 जंबुक रिहिन सों रुचि राखै ।
 राखि घनी मरजाद धनी,
 मरि याद बनी रखिबो अभिलाखै ।
 लोक मैं है मरजाद ही जीवन,
 ता बिन जीवन स्वाद न चाखै ।
 तू मरजाद मिटाइ सबै,
 इक जीवन बाद ही को भल भाखै । ५३।

ह्याँ तो यहै निहचै है अतुष्ट,
 कि रुष्ट है तू करिहै कहा मेरो ।
 चाह नहीं परवाह नहीं,
 सुख औ दुख की दोऊ हैं बिनसेरो ।
 कै असि तेरी कि नाह की बाँह,
 यहै सकिहै करि मो उर फेरो ।
 तीसरी बात न जानति हौं,
 गति ईसरी की नहिं मानति मेरो । ५४।

या विधि सों बहु साम औ दाम,
 विभेद की बातें बनाइ बनाइ कै ।
 चाह्यो मनावन जानकी को,
 पै चली न कछु मन मान्यो मनाइ कै ।
 त्वेष तैं द्वेष भरो भभख्यो,
 सँभख्यो बहु रोस तैं जोस जनाइ कै ।
 धायो अराति प्रतारिबे को,
 औ उतारिबे को मद वीर गनाइ कै । ५५।

भामिनी भूखन सुंदरी जासु,
 पुरंदरी दासी बनी रहती है ।
 दीन हिता दुहिता मय की,
 अहिता न कबों कोउ की रहती है ।
 काम क्रिसोदरी नाम मदोदरी,
 सोदरी हू ते सिरे रहती है ।
 रावन की पटरानी बनी,
 पर हानी ते दूर सदा रहती है । ५६।

सो बढ़ि हाथ गह्यो दसमाथ को,
 साथ ही उरि गरे बिच बाहैं ।
 बोली विनीत है प्रेम प्रतीत सों,
 यों नृप-नीति दिखावती नाहैं ।
 आस्रिता हीनबला पै न चाहिए,
 एती हलावनि जो दिल दाहैं ।
 याहि अराम दै कीजिए राम,
 सु जाते यहौ प्रभु काम सराहै । ५७।

यों सुनि प्रेयसी के बर बैन,
 दसानन मैन मदैन सँभारत ।
 होत अचैन हू चैन लह्यो, करि-
 सैन कह्यो रकसीन जुहारत ।
 त्रास दै औचक साँस दै,
 आस दै बेस बिसास दै बास सँवरत ।
 जा बिधि सों बनै राम सुबाम,
 करौ सोइ काम मुदाम सुधारत ॥५८॥

यों कहि टेरि कै फेरि अगेरि,
 कह्यो रकसीन सों घेरि ततच्छन ।
 रच्छन ऐसो करौ जेहि ते,
 कोउ तौर कहूँ न सकै करि गच्छन ।
 मानै न तौ लगि दै दै घनो दुख,
 साँसति कै कै बनाइ कुलच्छन ।
 कीजियो औधि बितीतत ही,
 कुरुखी लखि याहि सबै मिलि भच्छन ॥५९॥

तौ लगि मंदोदरी अरु और,
 सबै महिला मिलि कै धिरियाई ।
 लै गई रावन को तित ते,
 इत सीता सती अतिसै अकुलाई ।
 लागी बिलाप करै अति दीन है,
 ज्यों कपिला है अधीन कसाई ।
 सो दसा सोचत ही दुख होत है,
 सो कहूँ कैसे तुम्हें समुझाई ॥६०॥

तौलों नियोजित राकसी वै,
मनभावती पाइ निसाँक निदेसै ।
लागी कटा करै वै विकटा,
निकटाइ नटाइ मिटाइ अंदेसै ।
एतेई मैं तिनमैं की सुभामति,
राच्छसी एक बिसेस समै से ।
बोली बुझाइ कै आसुरी ब्यूहहिं,
आसुरी नीति निराइ मनै से । ६१।

छोड़ि विरोधपनो अपनो,
पहिले सुनो जो सपनो हम देख्यो ।
सूचित होत बिजै जेहिते,
एहि जानकी की निहचै उर लेख्यो ।
बानर एक बली, गढ़ लंक को,
फूँकि दियो निज नैन निरेख्यो ।
माथ औ हाथ कट्यो खर पीठ पै,
दक्खिनै जात दसाननै देख्यौ । ६२।

बारिदनाद घटास्रुति आदिक,
जे बर बीर रहे बलवारे ।
ते सिगरे रन जूझि गए,
जिय बूझि गए रुचि रोस को सारे ।
पायो अभीखन राज बिभीखन,
साज समाज सबै सुख वारे ।
या सपनो सच ह्वै जरूर,
कहाँ बच भाखि लख्यों भिनुसारे । ६३।

आगम को अनुमान भलो,
 मत मानि कुबानि ते हानि मनै कै ।
 मोह मजाइ सनेह सजाइ,
 सु जाइ सिया पद पै सिर नै कै ।
 बाध्य है त्यागि अबाध्यता को,
 अपनो अपराध सुनाइ प्रनै कै ।
 माँगैं छमा मिलिकै सबही,
 जेहि तौर मिलै अनुनै कै बिनै कै । ६४।

राजी रहे सिय के अपनो, सब-
 तौर भलोई भलो लखि पैय्यत ।
 आइहैं है बिजयी जबहीं,
 रघुनायक रावन की बनि मैय्यत ।
 वा समै अहै न काम कोऊ,
 धन धाम धरा के गुलाम ए दैय्यत ।
 ता समैं जीव यहै रखिहै,
 भखिहै निज पीतम सों कहि रैय्यत । ६५।

आवौ चलौ मिलि के सबही,
 सब ही बिधि सों जिय की रुचि रेखत ।
 सेवा करैं निज देह सनेह सों,
 नेह सों तेह को ताप दुरेखत ।
 जाते मिलै सुख रंचक सीय को,
 सोई उपाय करैं अवरेखत
 दुःखिनी को दुख देखि महा-
 दुख होत मनै न बनै मुख देखत । ६६।

यों सुनिकै त्रिजटा की कही,
सबही मिलि संमत कै अनुरागीं ।
जाइकै पोच सकोच बिहाइ कै,
सोचि सबै सिय के पग लागीं ।
देखिकै भाव बिरोधिन को,
अव रोधित है सिय सोच में पागीं ।
पै परिसोध लह्यो न कछू,
मन बोध गह्यो बान वेस बिरागीं । ६७।

देखि दसा तितकी हितकी,
अनरोचित मोचित सोच में आयो ।
कौन उपाय करूँ जेहिते, मोहि-
जानि लैं सीय स्वपीय पठायो ।
और उपाय न पाई जबै,
तब राघव को जसगान ही गयो ।
सो सुनि सीय चितै चकितै,
सुचितै हमैं औचक बैन सुनायो । ६८।

को तुम कौन के भेजे कहाँ,
केहि के हित कैसे इतै चलि आए ।
जानत कैसे रघूत्तम को,
जेहि को जस पावन गाइ सुनाए ।
साँची कहौ, कर जोरि कहाँ कपि,
हौं अति आतुर देति जनाए ।
रूप बनाए बली नुख को,
सुख देत हौ लेत दुखै अपनाए । ६९।

यों सुनि के बच जानकी के,
 अति दीन अधीन है हौं न रुक्यो फिरि ।
 आदि ते अंत लौं राम कथा,
 कहि गाइ सुनाई यथामति है थिर ।
 सो सुनि पूछ्यो, 'कहाँ तुम सों
 प्रभु सों केहि हेतु हिताई भई चिर' ।
 हौं कह्यो, 'जैसे भई सभई',
 दिखराय चिन्हानी दई मुँदरी फिरि । ७०।

देखत पीतम को मुँदरी,
 सब सीतम भूलि गई सिय ही ते ।
 आनंद सों रँगिगो अंग अंग,
 उमंग सों ढंग भयो सिथिली ते ।
 रोम खड़े भए स्वागत को,
 अनुराग सों पूरिगे नैन अमी ते ।
 जानि परी जनु आनि मिले,
 रघुवंस बिभूखन प्रान पिरीते । ७१।

मोद अमात उरायत मैन,
 समात सुवाद ही मैं बहुलाई ।
 राग सों सारो गरो भरिगो,
 गरिगो अनुराग ही मैं गरुआई ।
 पूछिबे के हित राम कथा,
 अजथारथ रूप उठी अकुलाई ।
 जात कमात उदेग तऊ,
 अतुराइ कै बोलीं ममात जनाई । ७२।

‘माया ते ऐसी रची न गई,
 विरची न गई कहूँ लोक मैं ऐसी ।
 देव विनिर्मित रत्नमई,
 अतिजन्न सों जोड़ लही नाहिं तैसी ।
 दीन्हीं सुरेस नै मो ससुरै,
 दसरत्थ नरेसहिं मानि हितैसी ।
 सो रघुनाथ के साथ रही,
 तुमरे कपि हाथ परी किमि कैसी ।७३।

‘बीर बली मजबूत महा,
 दस चारि हजार निसाचर मारे ।
 जो इकलोई जनस्थल मैं,
 निज बानन तैं बिधि सों बधि डारे ।
 सो तो तृलोक जई निजई,
 तेहिके करकी मुँदरी अनुहारे ।
 पाई कहौ केहि तौर सों पूत,
 न तो मैं इतो बल बूत निहारे ।७४।

हौं करजोरि विदेहजा सों कह्यो,
 ‘मातु सँदेह न कीजिए मोपर ।
 हौं प्रभु दूत न धूत कहौ तव-
 पूत हौं यामै न संसय को थर ।
 आपुही के पहिचानिवे काज,
 निसानी दई रघुराज नै जो कर ।
 औ कछु बानी जुबानी कह्यो,
 सो कहानी कह्यो चहौं दीजिए औसर ।७५।

यों कहि पाइ निदेस बिसेष,
 सँदेस कह्यो प्रभुसों समुझाइ कै ।
 और कह्यो हमै आयसु दै,
 कछु लीजिए काज निजी अपनाइ कै ।
 जौ कहौ बंधु समेत दसाननै,
 मारुं जोरावरी साथ सहाइकै ।
 कै गढ़ लंक उखारि तुम्हैं सह,
 लै चलौ नाथ पै सिंधु मझाइ कै । ७६।

बोलीं सिया कछु कामना है,
 बस कामना है उर अंतर एकै ।
 धर्म धुरंधर श्री रघुवीर जू,
 बानर भालु चमू संग लै कै ।
 आवैं इतै चढ़ि कै गढ़ लंक पै,
 नीच निसाचरै तुच्छ मने कै ।
 अंस समेत सबंस दसाननै-
 मारि, हमैं लै चलैं तजि टेकै । ७७।

मोहिं दियो है, सुरुष्ट हूँ दुष्ट नै,
 औधि द्विमास की जाहि बितीतत ।
 हूँ कै अतुष्ट न राखि है जीवित,
 सीवित हूँ मम आयु है रीतत ।
 जाइ यहै कहियो बस नांहसों,
 बांह गहे की पनाह है बीतत ।
 अंतर बीच न आइ बचाइहौ,
 तौ फिर पाइ हौ देह अतीतत । ७८।

हौं कह्यो अंब तिहारी कही,
सबही कहिहौं प्रभुसों समुझाइ कै।
औ फिर औधि के अंतर आइहौं,
श्री रघुराजहिं संग लिवाइ कै।
पै यहि औसर हेरि हरे हरे,
फूले फरे बहु खूख लुभाइ कै।
मोहिं छुधा लगी, याते अहार को,
दीजिए आप उपाइ बताइ कै।७९।

बोली सिया, यह रावन को,
प्रमदावन है घने मोद की सामा।
यामैं बिहार करैं नितही,
सुर जच्छ औ रच्छन की बर बामा।
यामैं स्व इच्छित रूप सों पौन,
न गौन सकै करि आठहू यामा।
रच्छत याहि बड़े बड़े बीर,
बली अतिकाय निकाय मुदामा।८०।

मोहिं नहीं इनते भय मा,
मन मा तुम रंचक जौ सुख मानौ।
तौ परि घोर घनो दुख मैं,
दुख ही को सुखै करिकै अनुमानौ।
तेरे असीस ते ए रकसीस,
कसीस न कै सकिहैं दृढ़ जानौ।
दीजिए बेगि निदेस दया करि,
मो पै मया करि मोह न आनौ।८१।

मो लघु रूप चितै, सुचितै,
 सियको अति सोच भयो लगौ भावन ।
 तौ लगि हौं प्रगट्यो वपु आपुनो,
 भासित भूधराकार भयावन ।
 देखि लह्यो उर मोद घनो,
 चित चक्रित है चितवै लगौ चावन ।
 देइ असीस कह्यो सुत जाहु,
 अघाइ कै खाहु यथा रुचि पावन । ८२।

हौं गुन्यो आइ इतै सु चितै,
 प्रभु को भयो कारज एक तौ पूरो ।
 दूसरो सेस है, देखियो या खल,
 को बल सो रह्यो जात अधूरो ।
 या मिस सोऊ लख्यौ चहौ और,
 भख्यौ चहौ अमृत सों फल रूरो ।
 यौ निरधारि प्रनाम कै सीतहिं,
 हौं चह्यो वीरुध-ब्यूह-कँगूरो । ८३।

खात ही खात महा उतपात,
 अरंभ कियो हम दंभ को धारे ।
 जेते रहे बर वीरुध बेस,
 सबेस उखारि तिन्हैं महि डारे ।
 तोरि मरोरि मक्कामकी भोरिकै,
 चौ दिसि मैं मिखराइ पवारे ।
 वा प्रमदावन को मद गारि,
 छिनै महँ जोवन जोर निकारे । ८४।

रच्छक जेते रहे तितके,
बनि तच्छक प्रास नसे बिनसे ते ।
जामुनमाली, महा बलसाली,
चमू सह काल के गाल बसे ते ।
किंकर आदि असंख्यन बीर,
अधीर से आपु ही आइ फँसे ते ।
मंत्रि प्रहस्त के सात सपूत,
अकूत बली रन खेत खसे ते । ८५।

बैरिन मैं जिनकी रही आँच,
महा भट पाँच बली मुर हू ते ।
ते परि मेरे करै निकरै,
छन ही मैं गए रन के मख हूते ।
फेरि अछै को भयो छय दारुन,
और न पाई सहाय कहूँ ते ।
सेस मैं आयो सुरेस जयी,
घननाद बिसेस है जो जम हू ते । ८६।

सो कल सों छल सों बल सों,
सबही बल सों खल मो संग हाख्यो ।
फेरि ह्वै ओट मैं खोट महा,
बर ब्रह्म को अस्त्र निरस्त्र पै डाख्यो ।
हौं गुन्यो हौं बिधि हू ते अवध्य,
तऊ बिधि एक बिधेय बिचाख्यो ।
या बिधि मानि बरस्त्र प्रभाव,
दसानन सों हौं करौं देखुहाख्यो । ८७।

मानि कै अस्त्र प्रभाव बँध्यो,
 बँधिकै अधिकै सिथिलीपन धारे ।
 बारिदनाद के हाथ पख्यो,
 पहुँच्यो दसमाथ के जाइ दुवारे ।
 हेरथो तितै असुरेस सभा,
 जेहि की बिभा जाति कही न सुतारे ।
 आजु लौं ऐसी प्रभावभरी,
 निरखी नहीं दूजी यहै निरधारे । ८८।

रंक लौं डोलैं धनेस जहाँ,
 औ सुरेस ससंक रहैं मन मारे ।
 देख्यो महा करुना सों भख्यो,
 बरुन जेहि ठौर ठिके ठिठुहारे ।
 हेख्यो उदास मनै समनै,
 भयभीत भए भकुआसे भिखारे ।
 दाहकता तजिकै दहनौ कहनौ,
 करें कायर की गति धारे । ८९।

जोह्यो जहाँ मरुतै रुतिहीन,
 औ दीन अधीन लौं नैरित हेरे ।
 'ईश' तौ वैसे असीसिबे के हित,
 रोज पुजावत आइ सबेरे ।
 त्यागि विकल्प बृहस्पति को,
 बसि जल्पत अल्प ही अल्प निबेरे ।
 और की कौन कथा सबिथा बिधि,
 बेद सुनावत आइकै नेरे । ९०।

देखिकै ऐसो प्रचंड प्रताप,
न मो मन में कलु ताप अमायो ।
बाद बिबादन हू मैं मनाक को,
हौं धरि धाक बराक बनायो ।
कोपि दियौ बध दंड हमैं,
करजोरि विभीखन ने कमवायो ।
अंग बिहीन करै हित पूँछ मैं,
लै पट तूल समूल बँधायो । ९१।

पुच्छ बिहीन करै हित तुच्छ,
अराति जमाति कुख्याति मैं लागी ।
तेह सों देह बचाइ सु नेह दे,
वेह सों बारि दियौ बस आगी ।
सो लहि धीर समोर सधीर है,
आपुही आपु हरै हरै जागी ।
देखि धुकाधुकी पावक की,
अधिकाधिकी मो मति मोह मैं पागी । ९२।

हौं लग्यो सोचन अर्चिष को,
अधिकात निहारि मनैमन भाइकै ।
रावन के बल को बहु अंस,
बिधंस कियो हम औसर पाइ कै ।
पै बल मुख्य बचो रहिगो,
दृढ़ दुर्ग औ कोष सु तोष बिहाइकै ।
चाहिए ताको कियो अपचै,
निहचै यहि पावक बीच जराइ कै । ९३।

आइ इतै सिय सोध लियो,
 प्रतिसोध लियो करि क्रोध करेरो ।
 जोधन को अवरोध लियो,
 बर अस्त्र को रोध लियो चहुँ फेरो ।
 रावन हू ते बिरोध लियो,
 अनुरोध बिभीषन 'को बहुतेरो ।
 पै गढ़ को नहिं बोध लियो,
 न प्रबोध लियो प्रभु के चित करो । १४१

यो हम चितत ही रहे ता बिच,
 ते सिगरे मिलि मंत्र दृढ़ाइ कै ।
 लै चले मोहिं फिरावन को,
 चहुँ ओर पुरी बिच ब्यूह बनाइकै ।
 तौ लगि हौं निज अंग सँकोचि कै,
 बंधन मोचि कढ़यो अतुराइकै ।
 कूदि चढ़यो कलधौत कँगूरन,
 पै बनि कूर लँगूर उठाइ कै । १५१

जाइ तितै बपु भूधर लौं,
 बिहदै गति रूप बढाइकै आपको ।
 फूँकि दियौ सहजै गढ़ लंकहिं,
 सँके बिहाइ उताप के ताप को ।
 जे निकरे पकरे गए वे,
 सकरे परि ते जकरे परिताप को ।
 खूने गए, कछु हूने गए,
 कछु भूने गए धरि कै दृढ़ दाप को । १६१

या विधि बंक हूँ फूकि दियौ,
सब लंकहिं हौं लगि साँझ ते भोर लौं ।
एक बिभीखन को गृह छोड़िकै,
सारो गढ़ै इक ओर ते छोर लौं ।
हाटक कोट तैं फाटक लौं,
परकोट के चौदिसि मूल ते कोर लौं ।
सेस बच्चो न कोऊ थल ऐसो,
जख्यो नहिं जो उबख्यो नहिं गोर लौं । ९७।

लंक निवासी अतंक भरे,
उर संक भरे बनि बेहद व्याकुल ।
भागि न पावत आगि तपावत,
पावत ना कल आरत आकुल ।
दोखी दसाननै लागे सरापन,
पापन को फल पाइ समाकुल ।
कोऊ जरै लगे, कोऊ बरै लगे,
कोऊ लगे चिघरै धरि काकुल । ९८।

देखि महादुखदाई दसा,
तिन दुष्टन की अति तुष्ट भए हम ।
गर्जि हँहास कै कूदि परे,
लवनांबुधि मैं सियराइवे को सम ।
केतिक बेर लौं मज्जि निमज्जि,
थकाहट की लखि आहट को कम ।
नाहर लौं कढ़ि बाहर हूँ गयो,
सागर ते सुखपाइ अनूपम । ९९।

विक्रम को क्रम पूर भयो,
 स्त्रम दूरि भयो सरिता बर न्हाए ।
 ह्वै गयो धूर अभिक्रम को भ्रम,
 या बिधि सों गढ़ लंक जराए ।
 चाहत होन अपूर उपक्रम,
 हौं निज हाथन काज नसाए ।
 जोह्यो न जानकी को फिरि,
 जा हित सिंधु अतिक्रम कै इत आए । १००।

एतो बड़ो गढ़ लंक जस्यो,
 उबस्यो न कोऊ बिन ताप बिसाहे ।
 ता बिच वैठी अकेली न कोऊ,
 सहाय सहेली, जो भीर निवाहे ।
 ह्वै है बची केहि तौर सिया,
 अति भीरु हिया एहि दाह के दाहे ।
 हाय हौं कीन्ह्यौ कहा यह काज,
 कहा कहिहौं रघुराज के चाहे । १०१।

ठाढ़ो ह्वै बारिधि के उपकूल मैं,
 भूल को आपने सोचत सोचत ।
 काज नसाय गयो एहि सूल मैं,
 नैन तैं नीर बिमोचत मोचत ।
 चूक की हूक धँसी उर मैं,
 सुविचार की कोंचनी कोंचत कोंचत ।
 ह्वै गयो एक ही बार अधीर,
 लही तदबीर न रोचत रोचत । १०२।

व्योम बिहारी सुचारन सिद्ध की,
 तौ लगि कान परी सुनि बानी ।
 कैसो सपूत है मारुत पूत,
 कियो अजगूत कला मनमानी ।
 लंक जराय बराय सिया को,
 करी जितनी दनुजात की हानी ।
 सो न सकै करि कोऊ कहूँ,
 एहि को बलबूत न जात बखानी । १०३।

यों नभचारी सुचारन सिद्ध की,
 बात सुने भरिगो मुद मो मन ।
 तौ लगि भानु प्रभा भई कोमल,
 सूर चले सरिता बर मज्जन ।
 चारि हू कोद बिनोद बढ़ै लग्यो,
 काकली लागे करै द्विज के गन ।
 सीरी समीर चलै लगी मंद,
 सुगंध सों पूरि उठ्यो सिगरो बन । १०४।

हौं हू निसागम जानि चल्यो,
 प्रमदावन जानकी को अवलोकन ।
 जाइ लख्यो वा असोक तरे,
 वोहि तौर तैं बैठी बिसूरति सोकन ।
 धाइ पख्यो पग पै जुर तै,
 तुर तै उठि कै लगी मोहि बिलोकन ।
 हेरि अनच्छत आयो हमैं,
 अधरच्छत कै अँसुवा लगी रोकन । १०५।

फेरि सनेह सों फेरि करै,
 मम सीस पै दै दै असीस सुभावन ।
 आनंद पूरि लगीं हितवै,
 चितवै लगीं चाहि चितै भरि भावन ।
 रोकन चाह्यो हमैं बहुतै अनुनै,
 औ बिनै सों भरी अनुभावन ।
 पै न रुके हम, चाही कछु,
 प्रभु के हित चीन्ह भरी सुविभावन । १०६।

हेरि हमैं चलिवे कहँ उद्यत,
 मैथिली औचक सोच समानी ।
 सीस तैं काढ़िकै सीसमनी,
 मम हाथ धख्यो पहिचान प्रमानी ।
 औ कछु बानी जबानी कह्यो,
 निज गुप्त कहानी हिए अनुमानी ।
 आसिस दैकै बिदा दर्ई मोहिं,
 निदा दै चल्यो हौं हिए सुख मानी । १०७।

आसिस और असीस लै अंब को,
 हौं अविलंब चल्यो द्रुत ह्याँते ।
 आइ अरिष्ट के शृंग ही ते,
 उछख्यो धख्यो मारुत को पथ याँते ।
 गाहत औ अवगाहत सिंधु कां,
 आयो महेंद्र पै जोहि जिया ते ।
 साध्यो सबै कपिराज को कारज,
 श्री रघुराज को राधि हिया ते । १०८।

पाइ तेज बल आपको, औ प्रसाद रघुराज ।
 जुग अमोघ आस्रय मिले, भयो सिद्ध सब काज ।१०९।
 मो जानत सब ही सध्यौ, श्री सुकंठ को हेत ।
 अब नहिं कछु बाकी रह्यौ, रह्यो जौन अभिप्रेत ।११०।
 सिय अनुसोधन मैं कियो, जौ कछु हौं उत काज ।
 कियो निवेदन आप सों, सो सब ही जुवराज ।१११।
 अब सब मिलि बनि एक मत, अनुचित उचित बिचारि ।
 कहौ कहैं सो चलि उतै, रघुपति सों निरधारि ।११२।

सेस होय जो काज, ताहि तुरत करिकै अबै ।
 चलहु जहाँ रघुराज, अब बिलंब इत उचित नहिं ।११३।
 सुनि समीरसुत बैन, बालितनै बोल्यो हुलसि ।
 चलहु चलैं सब ऐन, सुनि सब ही उठि चलि परे ।११३।

इति श्री लंकादहन काव्ये प्रमोद-प्रसरण नामकोऽष्टमः सर्गः ।



नवम सर्ग

संतोष-संपादन

सीतापति राम जू को खबरि जनैबे काज ।
धाए कपि निकर समोद सिंधु बेला सों ।
गाहत गाहन पथ, सफल मनोरथ है,
आए मधुवन के समीप हृद हेला सों ।
पाइकै इसारो, जुवराज को सहारो मानि,
दूटि परे सब ही उमंग भरि रेला सों ।
मधु फल खान लागे, कोऊ कहूँ गान लागे,
कोऊ अलगान लागे भूपकि झमेला सों ।१।

धाए कोपि रच्छक निवारै हेतु भच्छकन,
पच्छक सुकंठ के बिपच्छिन को पाय पाय ।
बरजन लागे कपि निकर समच्छ भच्छ,
तौ लगि प्रतच्छ ह्वै समूह समुहाने जाय ।
मारि मारि मुष्टिक प्रधच्छित करै ते लगे,
रच्छक अदच्छ अकुलाए करि हाय हाय ।
दधि मुख मातुल सुकंठ को बिकुंठित ह्वै,
लुंठित धरा पै पखो व्याकुल वरिष्ठकाय ।२।

उठि रुठियाइ धूलि धूसरित काय धायो,
आयो कपिराय पै जनायो हाल हावी को ।
गब्बर न कीन्हो पाइ अब्बर जबर जौन,
जाहिर जनायो तौन खबरि खराबी को ।
सुनत सुकंठ मति कुंठित भई ना उत्-
कंठित गए ह्वै हाल सुनत सिताबी को ।
जान्यो ए जरूर करि आए प्रभुकाज ना तो,
करते न काहू ब्याज काज या नवाबी को ।३।

धाए उतकंठित सुकंठ स्वपुरी ते उतै,
 आए इतै जूथप समूह कपि कायमान ।
 अंगद, सुखेन, नल, नोल, कुमुदादि संग,
 बीर हनुमान बृद्ध रीछपति जांबवान ।
 लागे सबै मिलन परस्पर जुहार करि,
 कोउ मनुहार करि प्यार करिकै समान ।
 आनँद अमात ना जनात रंग ढंगन ते ।
 आए करि काज रघुराज को प्रहृष्टमान ।४।

हिलि मिलि भेंटि कपिराजहिं समेटि सब,
 आए कपि निकर सहेट रघुरैया के ।
 भक्तिरस मद मैं मते से भूलि सदमै परे,
 ते आइ पद मैं पुनीत दुँहुँ भैय्या के ।
 चाह सों चितै कै अति हेत सों हितैकै,
 लगे लोटन चरन रज-रासि मैं रमैया के ।
 आनँद मगन चूमि पगन लगन लागि,
 ठाढ़े भए जोरि कर संमुख सहैया के ।५।

नेह लखि तिनको सनेह सह राजा राम,
 निरख्यो कृपा की दीठि नीठि कै सबनि को ।
 पूछ्यो कुसलादिक सहेत सबही सों चाहि,
 बोले बुद्धिमान जांबवान सब दिन को ।
 'नाथ जेहि हेखो दया दीठि कै निबेखो ताहि,
 अकुसल कैसी रही भीर कौन विनको ।
 विजयी वहै है धीर निजई वहै है वीर,
 विजयी वहै है गन्यो दास माहि जिनको ।६।

दौलत दराज महाराज रघुराज राज,
 कोसलाधिराज आज पूखो काज खास को।
 ल्याए खोज जनकलली की सब तौर तापै,
 आए देखि आखिन सती के बास बास को।
 याही व्याज कीन्हो जौन अद्भुत अकूत बूत,
 मारुत-सपूत नै सुसाहस बिकास को।
 सो तो कहि जात ना हजार मुख हू तैं तौन,
 एक मुख कैसे कै बखानौ इतिहास को।७।

इबिधि सराहि कै सुनायो इतिहास सब,
 जैसे गए पौनपूत नाँधि सिंधु लंका में।
 जाइ तित सीता की सुखोज करि ओज भरि।
 कीन्ह्यो बल बिक्रम विकास गढ़ वंका में।
 बिपिन उजारि रजनीचर सँहारि-हारि,
 फूँ कि दीन्ह्यो रच्छस-पुरी को धंसि अंका में।
 रावन के बल को बिधंसि फिरि आए फेरि,
 पारावार पार करि एक ही फलंका में'।८।

हनुमत-कीरति कथा को यथातथ्य सुनि,
 राघव की औचक अकथ्यगति ह्वै गई।
 कोयनि में आई करुनाई की झलक लोल,
 लोयनि में ललकि लुनाई सी सम्वै गई।
 छाई अरुनाई बेस बदन बिभा पै सेद-
 कन तैं खराई रुखराई खेह खवै गई।
 निपट निकाई की सुहाई सुघराई सुठि-
 भाई प्रति अंगन छपाई छबि छै गई।९।

दूरि भई मोह की मलीन मुरझाई दसा,
कोह कुरुखाई की रुखाई कहरै लगी ।
स्यामता मैं आनंद अमंद अतिरेकन तैं,
गह गह गालिब गुराई गहरै लगी ।
सिथिलित ढंग मैं उमंग दिखराई परी,
अंगनि मैं ललकि लुनाई लहरै लगी ।
आई फबि रबि की बिभा सी दुति आनन पै,
दबि सी गई ती छबि छूटि छहरै लगी । १०।

मारुत के सुत की करनी,
सुनिकै गुनिकै मन मोह महाभरि ।
चाव सों चाहि हितै सहितै,
अतिभाव सों भाइ भुजानि लियो भरि ।
बारहिं बार स्व-अंक मैं लाइ,
ससंक ह्वै भेंटत यों हियरा भरि ।
ज्यों निधि पाइ सुरंक दिए,
गहि गोवत खोइबे के भय सों भरि । ११।

भेंटि स्व-अंक समेटि भली विधि,
फेरिकै सीस सरोरुह पानी ।
नेह सों चाहि सराहि कपीस सां,
बोले मया करि श्री बरदानी ।
'तात कहौ केहि तौर तितै,
बसि द्योस बितावति जानकी रानी ।
राकसी वृंदनि मैं धिरिकै,
किमि रच्छति प्रान गहे कुल-कानी' । १२।

जोरिकै हाथ कह्यो कपि-
 नाथ 'सुपाहरु रावरो नाम नियंत्रित ।
 ध्यान तुम्हार उरंतर माहिं,
 निरंतर कीन्हें कपाट लौं तंत्रित ।
 बैठी बितावतीं हैं निसि बासर,
 राखि स्व-नैनन को पद जंत्रित ।
 जाइ सकैं किमि प्राण निदान,
 रह्यो अभियान जितै अभिमंत्रित । १३।

आवत जानि प्रमान के हेतु,
 दियो मोहिं सीसमनी की निसानी ।
 औ कह्यु मोते जबानी कह्यो,
 अनुरोध जनाइवे को जिय जानी ।
 फेरि हिए अनुमानि कह्यो,
 प्रभु के पहिचान को काक कहानी ।
 सो कहिबो चाहैं रावरे सों,
 यदि आयसु होय तो जोय जबानी' । १४।

यों कहि सीसमनी दियो हाथ,
 लियो रघुनाथ लगाइ कै ही में ।
 किंचित बेर लौं चिंतित ह्वै,
 गए सोक को आयो उफान सो जीमे ।
 नैनन नीर भख्यो पुलक्यो तन,
 खेद सों सेद चलयो बहि धीमे ।
 आयो गरो भरि बोलि सके नहिं,
 ग्यान औ ध्यान गयो लागि सीमे । १५।

किंचित काल बिहाल रहे,
फिर खयाल कै हाल सुनै हित आकुल ।
हेखो कपीस तनै जितनै, तितनै
मन मैं है महा बिरहाकुल ।
बोले न बैन सुनैन के सैनन
ही मैं इसारो कियो बनि ब्याकुल ।
दीन्ह्यो निदेस अँदेस दुराइ,
सनेस सुनाइबो को समयाकुल ।१६।

“नाथ कह्यौ प्रथमै है प्रनाम,
दोऊ जन के पद पै धरि माथै ।
फेरि कह्यो या अनाथिनी की,
न लई सुधि आजु लौं जानि अनाथै ।
दीन के बंधु सुबंधु दोऊ,
प्रनतारति भंजन लै कपि साथै ।
आइ इतै खल को बल दारिकै,
मोहिं उबारियै आपुनै हाथै ।१७।

मन क्रम बचन चरन अनुरागिनी के,
बिहद बिरागिनी के राग को निवाख्यो ना ।
केहि अपराधन बिहाइ बिनु साध ब्याध,
बिबस मृगी लौं फेरि नैसुक निहाख्यो ना ।
बिछुरि मरी ना यहि कारन अजान बनि,
मेरी जान प्रानपति सुरति सहाख्यो ना ।
जाति कुल कानि आन मान भानुबंसिन की,
सान सोम अंसिन की यह तौ बिचाख्यो ना ।१८।

स्वाँस समीर जगाइ जिए ,
 बिरहागि तपावत तूल सरीरै ।
 पै अपने हित लागि सुधा ,
 सरसाइ बुझावत नैन अधीरै ।
 याही ते प्रान बचे अबलौं हैं, टिके
 तन मैं लहि या तदबीरै ।
 पै अब सोऊ सुरीतत औधि ,
 अतीतत पाइ कै त्रास गँभीरै । १९।

सिंह-बधू को सिंगाल चहै ,
 उपभोग कियो न सुन्यो कहूँ ऐसी ।
 सो गति मेरी भई इत हाय ,
 सही नहिं जाय अनीति अनैसी ।
 याकी न आवति लाज तुम्हें ,
 रघुराज कहौ यह बात है कैसी ।
 आनि तजी, कै तजी कुल कानि, कि
 बानि तजी अपनी रही जैसी । २०।

लाजनि हौं इतै जाति मरी ,
 सुख साजनि बैठि उतै दिन खोवत ।
 हाय हमारे हिए की बिथा ,
 तुम जानत हू क्यों अजान हूँ सोवत ।
 हानि चितै कुल कानि की हौं ,
 कितने दिन प्रानहिं राखिहौं गोवत ।
 प्रान गए, कुल कानि गए ,
 प्रभु रोवत हू बनिहै नहिं रोवत । २१।

सीता की विपत्ति की बिसालता कहाँ लौं कहौं ,
 बिनही कहे ही भली जानि सी परति है ।
 असन जसन बेस बसन बिहीन दीन ,
 अधिक अधीन है मलीन सी मरति है ।
 निमिख बिहान जाहि कलप सिरात 'ईश' ,
 करुनानिधान, आनि हानि ज्वै रहति है ।
 बेगि चलि बधिकै सबंधु खल खेचरनि ,
 ल्याइए सिया को ठीक जानि यों परति है" ।२२।

सुनि कपि मुख तैं सिया की दुःखदायी कथा,
 आए भरि लोचन बिसाल रघुबर के ।
 हेरत ही औचक कपींद्र कुल केहरी के ,
 प्रबल प्रचंड दोर दंड जुग फरके ।
 बोले कर जोरि 'नाथ दुख उर आनौ कहा ,
 मानौ जौ कही तौ अस्त होतै दिनकर के ।
 ल्याऊँ गढ़ लंकहिं उखारि जानकी को इतै ,
 सहित सहाय खल खेचर निकर के' ।२३।

बोले राम 'एहो कपि तुम सब लायक हौ ,
 मेरे प्रिय पायक सहायक अनन्य हौ ।
 संभव असंभव को सबिधि सधैया एक ,
 बिस्व बीच जनम लिए ही परजन्य हौ ।
 दुखदल-हारक संहारक दनुज-बंस ,
 ज्ञानिन गुनिन मैं गनाए अमृगन्य हौ ।
 जायो जेहि कोख तैं सजायो ताहि गौरव तैं ,
 धरम-धुरीन बीर धीर तुम धन्य हौ ।२४।

नीतिमय परम पुनीत तव आचरन ,
 कोह कपटाचरन जानत जघन्य हौ ।
 त्रिभुवन धाई धाक जाकी जगतीतल मैं ,
 ताहू को मनाकी करि मानत नगन्य हौ ।
 मम हित लागि करि सकत न काज कौन ,
 सदगुन-भौन मम सेवक अनन्य हौ ।
 सत्यपथ-चारी बर बिमल बिचारी बीर ,
 धीर धुर धारी उपकारी कपि धन्य हौ । २५।

कपि तन आवरन दिव्य कनकावरन ,
 सावरन सिस्य अवतिस्य जगमन्य हौ ।
 बिक्रम बिकास रन दीनन दृढ़ासरन ,
 आगतसरन त्याग जानत जघन्य हौ ।
 आनंद निवास मन पाप प्रतिभासमन ,
 सज्जन पपीहरान हेतु परजन्य हौ ।
 तेज-तप मान सीलमान तेहमान गुन-
 मान नीतिमान हनुमान ध्रुव धन्य हौ । २६।

ससि सों उग्यौ तू अंजनो के कोख अंबर तें ,
 बिबुध कुमुद कुल समुद सुमोद जन्य ।
 केसरी के चखन चकोरन रिझैया, तन-
 ताप को हरैया लोक ओक मैं न तो सो अन्य ।
 जन्मत सुबाल केलि कौतुक प्रस्यो है रवि ,
 बक्र सक राहु मद मथन करैया मन्य ।
 बाल ब्रह्मचारी नीति प्रीति को प्रचारी ,
 सुबिचारी तिहुँ लोक मैं न तोसों उपकारी धन्य । २७।

रच्छक स्वपच्छ के प्रधच्छक बिपच्छ के हौ ,
भूरि भय भच्छक बिरुयात बर बातजन्य ।
दच्छरन अच्छरन सरन धरन प्रण-
वच्छरन सामगान गायक सुगाता गन्य ।
लच्छन समच्छ परतच्छ अच्छ हारक औ ,
पच्छिराज प्रमद प्रहारक प्रमन्य मन्य ।
निज कुल कच्छमान गुरु इव गच्छमान ,
लच्छमान लच्छन प्रछन्न कपि धन्य धन्य' ।२८।

हैकै प्रभु मुख तँ प्रसंसित कपीस रुख ,
सुरुख गयो है अति सकुचन बेह तँ ।
'पाहि, पाहि' बदत पखो सो पद पंकज पै ,
उठत उठाए नाहिं सिथिलित देह तँ ।
लागे जन 'ईश' कर फेरन कपीस सीस ,
दै दै कै असीस सुहरावत सनेह तँ ।
बल करि लाए कृपा सिंधु उर आयत मैं ,
पायत न अंक मैं जुड़ावै लगे खेह तँ ।२९।

पोंछि पोंछि कर तँ सुखेह देह वारी सबै ,
मोछि मोछि त्रिग तँ सनेह जल पूरि पूरि ।
बोले प्रभु कपि सों दबावत उछास बेग ,
हृदय लगावत उछाह भरि भूरि भूरि ।
सुनु कपि, 'तो सों कबौं उरिन न हैहौं वहि ,
तेरे रिन भार को संभार सहि मूरि मूरि ।
प्रति उपकार को बिचार करिहौं हौं कहा ,
तेरे मुख संमुख न होत रुख तूरि तूरि' ।३०।

या विधि प्रतीति प्रीति रीति रुचिवारे मृदु ,
 मधुर मिठास सों समोए बैन सुनिकै ।
 गदगद कंठ सों सुकंठ के सहारे कपि ,
 बचन उचारे यों कृतज्ञ प्रभु गुनिकै ।
 'मसक करैगो कहा खसकि खगेस हित ,
 लाजन मरत चित 'ईश' धुनि-धुनिकै ।
 हम तौ निमित्त सब गावरे सहारे भयो ,
 तापै देन एतक बड़ाई आप चुनिकै' । ३१।

तू ही बनि स्रष्टा सृष्टि संकुल सृजत तू ही ,
 द्रष्टा बनि कीरति कलाप लखिबो करै ।
 तू ही थिति रूप है थिरावत, थिरत तू ही ,
 संहति सरूप है समस्ति भखिबो करै ।
 तू ही कवि, कवि की गिरा है, गेय गीत बनि ,
 गाता है तु ही तौ रुचि रेख रखिबो करै ।
 तू ही गुन, तू ही बनि गाहक गहत ताहि ,
 चाहक है चाह को चसक चखिबो करै । ३२।

जाकी नित्यता ते है अनित्य नित्य दीखै जग ,
 देख्यो जौ बिचारि उर अंतर निहारै पै ।
 पायो एक भासमान तो को अबिनासमान ,
 जायो जग नासमान जान्यो जिय हारे पै ।
 डोलत हिलत खात खेलत खुसाल भयो,
 बोलत बलाक तौन रावरे सहारे पै ।
 या ते अपने को सपने को पथी मानि 'ईश' ,
 दैत रखि थाती नाथ चरन तिहारे पै । ३३।

आइ पुर तेरे नट साज लै सबेरे हेरि ,
 पाइ पौरि तेरे कछु नाच नचिबो चहाँ ।
 तेरे पूत प्रेम को प्रसाद अवसाद बस ,
 और के न द्वारे फेरि नाच नचिबो चहाँ ।
 पर अब लौं जो घनी चाह चित चाहि तेरी ,
 नाच्यो बहु नाच सो न नाच नचिबो चहाँ ।
 रीझै तौ बचाउ नाचिबे तैं, औ न रीझै तौ तो ,
 जौन तू नचावै तौन नाच नचिबो चहाँ । ३४।

ए हो रघुरैया कोसलेस के कन्हैया ,
 कौसिला की कोख जैया जग जनक जमैया तू ।
 धरम धुरैया सत्यव्रत को करैया, चित्र-
 कूट गिरि कानन निकुंज को रमैया तू ।
 मनुज मनैया दुष्ट दनुज दरैया देव ,
 जन मन मानस अवास को अमैया तू ।
 मोहि अपनाइ जन अपनो बनाइ राखु ,
 नाखु जनि एरे मेरे करम कमैया तू । ३५।

सोई अवतार सरकार को सराहौं सदा ,
 जासों श्रुतिसार को प्रसार होय जग मैं ।
 जाके पद पात के पिछौरे परि लोक बीच ,
 पावैं गतिरोध ना बिमूढ़ गूढ़ मग मैं ।
 जाको चारु चरित चितौत चित चाव होय ,
 रुचिर रचाव होय रुचि को सुरग मैं ।
 जग को जँचाव होय, सुमाते सँचाव होय ,
 अमित उँचाव होय, भाव होय भग मैं । ३६।

प्रस्तुत अस्तुति पूरि समस्त ,
 कछौ कपिराय यहै बर दीजै ।
 आपने दासानुदासन मैं ,
 एहि दास हू की गिनती करि लीजै ।
 चाहत और नहीं कोउ तौर ,
 सुदीनन को सिर मौर पतीजै ।
 रावन के मद गारिबे को ,
 अब होति है बेर अबेर न कीजै । १८।

सोरठा

सुनि हनुमत के बैन समुद हेरि कपि राय तन ।
 बोले राजिवनैन चलहु चलै सब सिंधु-तट । ३८।

दोहा

संवत पद नभ व्योम चख माघ कृष्ण तिथि लोक ।
 भो परिपूरन ग्रंथ यह बुध जन आनंद ओक । ३९।
 महन मोह सियनाह पद सोइ अवलंबन पाय ।
 लहन लाह लंकादहन बिरच्यो 'ईश' बनाय । ४०।

इति श्री लंकादहन काव्ये संतोष संपादनो नाम नवमः सर्गः !

टिप्पणी

मंगलाचरण

(१) गनाली=गणों के समूह । घनाली=गुंथी हुई पंक्ति ।
शुंडशाली=गणेश । (२) तुंड=मुख । पयमंडल=स्तन । उराए=
समाप्त किए । (३) नाकी=ब्रह्मा । पिनाकी=शंकर । भानत=
भंग किए देता है । सरिहै= निर्वाह होगा । दुरंत=बिघ्न । (४)
उछंगि=गोद में लेकर । पसीजि=आर्द्र होकर । अड़ैतो=जिद्दी ।
टकटोहतै=ध्यान से देखती । नैसुक=रंचमात्र । कैसुक=किसी
तरह से । (५) परमा=परमतत्त्वमयी । गदाधरी=विष्णु ।
शूली=शंकर । जाया = स्त्री । (६) हृदि=हृदय । ह्यादिनि=
आनंद देनेवाली । कंठनादिनि = बोलनेवाली । उदेति = प्रका-
शित करके । निरत = नाचती हुई । (७) अनपाया = अप्राप्य ।
अंजती = भरती । बल्लकी=वीणा । मजेजि = रगड़ा देकर ।
(८) पिंगलोचन = हनुमान । रोचन=प्रकाशित करनेवाले ।
पोच = झूठ । (१०) आदिकवीस = वाल्मीकि । ही की =
हृदय की । सेस = लक्ष्मण । सेस = अग्रज । (११) चहन=
इच्छा । महन = मथनेवाला ।

प्रथम सर्ग

(१२) सकेलै = फेंकता है । (१३) कायमान = शरीरधारी ।

(१४) दर्पी = घमंडी । मौलि = शिर । अर्पी = अर्पित करने-
 वाला । अवकलत = सूझता । तर्पी = सड़पनेवाला । समन = यम ।
 (१५) निठैहै = नजदीक आएँगे । दिठाइ = दिखलाकर ।
 नठैहै = अप्रसन्न होगा । ठाइहै = स्थिर करेगा । दिठैहौं =
 देखूँगा । (१६) अलोक = लोक से बाहर । जवमान = वेगवाला ।
 (१७) अरंड = रेंड । परिघ = बेलन के आकार का एक हथियार ।
 (१८) नंदन = देवताओं का वन । नंदन — आनंदित करनेवाला ।
 अकदकै = इरादा करके । पूहन = टूटे हुए । बिहद = सीमा से
 बाहर । स्वन = शब्द । अरद = पीड़ित । प्रमदावन = रावण के
 बाग का नाम । अमद = शोभाहीन । (१९) भीतिमान =
 डरपोक । (२०) दरौना = दरने, खंड खंड करनेवाला ।
 (२१) कोए = आँख का ठेठर । समोए = रंगे हुए । जोए = देखे ।
 अगोए = प्रगट । नेह = तेल । (२२) रहस = भेद । अटबी =
 वन । उलौंक = उछाल । दारन = चीरने । बिदारन = फाड़ने ।
 (२३) कुलपाली = पालन करनेवाला । (२४) धारित = ठहराई
 हुई । देना = कर्ज । अरिवर = प्रबल शत्रु । सकास = पास ।
 सुखेना = सुखेन नामक वैद्य । पंचक = धनिष्ठा से लेकर रेवती
 तक पाँच नक्षत्र जिसमें एक के मरने पर पाँच और मरते हैं ।
 बिपंचक = विशेष खेलाड़ी । रथी = सेना का एक संमानित
 पद, रथ पर चलनेवाला योद्धा । अरथी = मुरदा ढोने की टिकठी ।
 अँकौर = अंक में बैठे; मृत । (२६), सुलच्छि = अच्छी
 तरह देखकर । द्वंदी = लड़नेवाला । वच्छ = पुत्र । सुरच्छित =

अच्छी तरह से रक्षित । परधच्छी = दूसरे को मारनेवाला ।
 परपच्छी = दूसरी ओर का । अलच्छी = न दिखाई पड़नेवाला ।
 (२७) अप्रमेय = अपार । तापी = तपानेवाला । वर्म = कवच ।
 सत्रान = टोप । (२८) अनिवारित = जो रोका न जा सके ।
 अधच्छै = जो तोड़ा न जा सके । किंकिनी = छोटी घंटी ।
 रव = स्वर । रंजित = भरा हुआ । पिसंग = पीला । (२९)
 अय = लोहा । मय = आधिक्य । सालिस = दूसरा । बान =
 पालिश । जवमान = वेगवान । सोदरी = बहन । वृकोदरी =
 अग्निवाली । मंदोदरी-जनक = मंदोदरी का पिता मय नामक
 दानव । (३०) मजायो = भर गया । तेह = ताव । छय = नाश ।
 (३१) गुन = गोन ; रस्सी । लगुहारी = लग्गा । संतरन = तैरना ।
 स्वकाल = अपनी मृत्यु । बयारी = हवा । बेला = समुद्र तट की भूमि ।
 (३२) हरीप = तुरंत । (३३) सोधि = जानकर । मंडलस्थित =
 मंडल के भीतर बैठा हुआ । नवोदिताभ = नया उदय होता हुआ ।
 सर = किरन । अंसुमान = प्रकाशित । वृत्त = गोलाई । कौणप =
 राक्षस । अनैसे = खराब । सत्रुसाली = शत्रु को सालनेवाला ।
 बुभुच्छी = भूखा । बैनतेय = गरुड़ । (३४) कृतांत = यम । लच्छि =
 निशाना बाँधकर । सुलच्छी = निशानेबाज । (३५) कटिबंध =
 कमरबंद । (३६) चंद्रहाँस = तलवार । चंद्रहासै = चाँदनी
 को । भासमान = शोभायमान । भासमान = चमकते हुए । (३८)
 खोट = बेइज्जती । बच्छस = छाती, वक्ष । प्रपाती = गिरे हुए ।
 (३९) इषु = बाण । (४०) अर्दित = पीड़ित । गरदी = नाशहोना ।

सादी = सवार । पयादिन = पैदल । पावकपदी = पैर के नीचे आग बिछी होना । (४१) बितारे = छितराना । अदाँतन = बिना दाँत के । दवारे = दबाना । (४२) पिछारै = पीछे रहनेवालों को । (४३) मेद = चर्बी । मेदिनी = पृथ्वी । पलोथ = अटाला । पल = मांस । पिल्लादा = पिसा हुआ ढेर । जंबुक = सियार । असूदा = अघाकर, तृप्त होकर । (४४) संबुक = सुतुही । सुरद = दाँत । कंक = चील्ह । बोहित = नाव । बलद = बोझे हुए । (४५) उतायल = जल्दी से । हायल = सवार होना । खरब = खप्पर । (४६) लरनि = युद्धकला । चरनि = दौड़ने का ढंग । शौर्य = बहादुरी । दिगरे = दूसरा । (४८) बात = वायु । जात = लड़का । निपात = नष्ट । अवसेसी = बचे । निसाँक = राक्षस ।

—:०:—

द्वितीय सर्ग

(१) मख = यज्ञ । हूत = हवन किया गया । अमर्षी = क्रोध-वाला । प्रधर्षी = मारनेवाला । उत्कर्षी = बढ़ाई चाहनेवाला । प्रकर्षिन = खींचनेवाले । प्रहर्षी = प्रसन्नचित्त । (२) महद्बल = विशेष बल । (३) पूषन = सूर्य । तिमिरावृत्त = अंधकार से ढका हुआ । उरंतर = हृदय । सुभाइ = अच्छी तरह । (४) धानुष = धनुषविद्या का ज्ञाता । अर्जित = प्राप्त । पितुअर्पि = पिता को अर्पण करनेवाले । दिति = दैत्य । (५) रीत्यो = खाली कराया । ओकहि = समूह को । स्वधाकन = अपनी धाक । बन्या = बाढ़,

जलप्लावन । जन्या = पैदा की हुई । अवरोधित = कैद, घिरे हुए । (७) विभात = शोभायमान । अवदात = स्वच्छ । अति-रथ = रथी से श्रेष्ठ; जो सौरथी को अकेले जीत सके । गब्बर = ढीठ । गनीम = शत्रु । स्वत्ववान = अधिकारी । जिष्णु = इंद्र । (८) पूतै = पुत्रों को । पूत = पुत्र । सोदर = सहोदर भाई । (९) हनोज = अभी । संगर = संग्राम । वनचर = बंदर । (१०) ठान = कार्य । ठानियो = करना । अठान = गिराना । (११) विषाद्यो = दुख में भर गया । बंदि = कैदी । कारा = कारागार । गथ = वेग । सनाह = जिरह बख्तर । सनद्ध = तय्यार होकर । धधक्यो = जलने लगा । पिनद्ध = घिरा हुआ । (१२) पर्व = पूर्णिमा । सर्वरीस = चंद्रमा । बिलुब्ध = मथता हुआ । अन्धि = समुद्र । चेता = जागरूक । नाग = हाथी । जोजित = नधा हुआ । प्रमथ = शंकर के एक गण का नाम । प्रनेता = मुखिया । पन्नगासन = हाथियों से खींचा जानेवाला रथ । पन्नगासन = गरुड़ । त्रिजग = तीन लोक । (१३) ईछन = नेत्र । बीछत = छाँटता है । कुंदी = मारना । तुंदी = तेजी । फुंदी = फंदा । (१४) मंद = शनिश्चर । द्वंद = संघर्ष । विनिंदित = घट गया । तुंदित = तीव्र । पितुबादी = बायु । धुंधित = धुँधली । पिंदित = रौंदी जाने लगी । जकंदि = उछलकर । (१५) घावत = घाव करता हुआ । जावत = बिलकुल । तावत = लेसता हुआ । भोरि = भ्रम से । (१६) सुमनस = देवता । सौतुक = सामने । खए = खोए से । पनस = कटहल । जुवनस = युवा । (१७) ज्यास्वन =

धनुष की डोरी का शब्द । आव = गुलाबी चमक, पानी । अच्छन = आँख । जत्रु = गले के पास की हड्डी । उकासि = ऊँचा करके । (१८) दीह = विशेष दृष्टि । कषायत = आँख तरेरकर । नीठि = अनिच्छा । छावा = साँप का पोआ (बच्चा) । (१९) अदभ्र = बहुत । अभ्र = बादल । पतंग = गुड्डी ; कनकौआ । पतंग = सूर्य । (२१) अरि = स्थिर होकर । अरि = शत्रु । चोष = तेज । चष = नेत्र । अप्रधर्षित = अजेय । करष = क्रोध । (२२) फलक = फल । आशुग = वाण । पुंख = वाण का पिछला भाग जिसमें पर खोंसे रहते हैं । पुंखित = पर लगे हुए । लच्छ लच्छि = निशाना साधकर । फनिफनिकै = फनफनाकर । ऐकि = बरदाश्त करके । अर्थवारे = काम देनेवाले । (२४) ननर्दत = गरजता हुआ । (२५) अनंदन = आनंद देनेवाला । कंद = जड़ । निकंदक = खोद डालनेवाला । (२६) मंडन = शृंगार । अनी = दल । (२८) कीने = द्वेष । यकीने = निश्चयपूर्वक । अकीने = बिना द्वेष के । (२९) लंगर, अडंगा, बगली, ढेंकी, पट = कुश्ती के पेंच । तरुपर = नीचे से ऊपर । (३०) सिथीले = बेदम, सुस्त । (३२) शरभ = एक विशालकाय पक्षी जो अब नहीं मिलता । अलभ = अप्राप्य । गरभ = हमल । गरभ = पेट में । अमाया = घुस गया । अकाया = बिना देह का । (३३) नदिसि = समुद्र । निबेण्यो = खोज किया । दुरावत = छिपाता हुआ । अबाधन = उच्छृंखल । (३५) अनवादी = उपद्रवी । वादी = बैरी । ब्रह्मवर्चस-प्रयुक्त = ब्रह्मा के तेज से युक्त । वादी = दुष्ट । प्रतिवादी = दुश्मन । (३६) सत्ता = शासन ।

अनुसासन, सासन=आज्ञा । इयत्ता=सीमा । गुरछि=चक्कर
 खाकर । छत=चोट । (३७) आँक=कीना । उकढ़ि=बचकर ।
 (३८) का रुती सों=किस शोभा से । व्यूढ़=कुंद । बगर=घर ।
 (३९) वररोह=वरगद की जटा (४०) निबंधन-प्रबंध=बाँधने की
 योजना । अर्कबंधु=बुद्धदेव । उद्बन्धन=दूसरा बंधन । अनु-
 बंधन=पुनः बंधन । (४१) देवपति-तापी=इंद्र को ताप पहुँचाने
 वाला । निघटावन को=पूरा करने के लिये । (४२) ओखा ह्वै=
 निर्जीव की नकल करके ; बेदम, सुस्त पड़कर । (४३) धँधिकै=
 फँसकर । दर्दन=दुःख से भर देना । वर्दन=वैल । प्रतर्दन=
 हाथ-पैर पटकना ।

—❀❀❀—

तृतीय सर्ग

(१) सुमार = गिनती का । तुमार = समूह । (२) निरी-
 छन = देखना । महार्ह = कीमती । बनक = बनावट । लुंज =
 लँगड़ा । सुदीठि = अच्छी नजर । वारत = मना करता है ।
 अवैयन = आनेवाले । दुरायो = छिपकर । (३) सानित =
 चोखे । अवसान = होश । (४) बिकटानन = टेढ़े-मेढ़े मुखवाले ।
 (५) यंत्रिन = बंदूकची । तपाकर = सूर्य । सकात = डर जाते हैं ।
 हृदसेरा = भय । पर ताप देनवारो = दूसरों को दुःख देनेवाला ।
 रेख्यो = खींचा । उर-डेरा = हृदय रूपी घर । (६) सकस कै =
 भर कर । नकस कै = ध्यान से । अकस = परछाहीं । (७) दीप्ति-

धर-शोभायमान; तेजयुक्त । खरायो = आग । खेह = राख । खर =
 तृण । नवाभा = नई रोशनी । अंसुकर = सूर्य । निलै = घर । तर
 = अधिक । (८) नेवर = खराब । तेवर = तरीका । तनक
 = खिंचाव । कनक = धतूरा । (९) सानुमान = अंदाजन । घान-
 रंध्र = नासिका । कज्जलाचल = नीलगिरि । सोहा = शोभा ।
 (१०) महा-ओजस = तेज । ब्यालाकीर्न = सर्पों से भरा हुआ ।
 अचैन = सुख से रहित । उगहि कै = उठाकर । (११) छकित =
 हारकर । बीजन = पंखा । हरी = पकड़कर लाई गई ।
 हरबर = शोघ्रता । अदीब = अदब से । नकीब = राज-दरबार
 में परिचय देनेवाला व्यक्ति । दबर = बड़ा घेरा । (१२) मरकत =
 पन्ना । प्रवाल = मूँगा । दवारी = पोती हुई । (१३) कनिक =
 चुन्नी । चिलिक = छूट, चमक । (१४) चर्चित = टँका हुआ । मजे-
 जवारी = दर्पवाली । कमलासन = ब्रह्मा । कलक = बेचैनी ।
 छलक = उत्साह । दलक = फटना । (१५) अनल्प = विशेष । सुर-
 सिल्पी = विश्वकर्मा । आरी भई = तंग आ गई । ओक = पाताल ।
 (१६) अर्दित = पीड़ित । चकौहैं = आश्चर्य से । (१७) अचित्य =
 विचार के बाहर । (१८) शर्मद = लज्जा देनेवाला । प्रनेता =
 मुखिया, सदाँर । धुरेता = धुरी को धारण करनेवाला । बर्चस =
 तेज । विचेता = मूर्छित । (१९) सनाह = स्वामी के सहित ।
 सहमे = भयभीत । सकासी = पड़ोसी । अदाह = बिना आँच के ।
 दह = गहरा जल । चह = पुल । थह — थाहा ।

चतुर्थ सर्ग

(१) रोचत = शोभा देते हुए । ठौन = जगह । उधायो = छद्म । (२) अपिसों = निश्चय करके । तेह = ताव । तपिसों = तप्त होकर । वृषाकपि = शंकर । छपि सों = नकली वेश में । (३) तंत्र = उद्देश्य । जोजित = लगा हुआ । असम = जो बराबर न हो । धनद = कुबेर । नदीस = वरुण । अहीस = शेष । जिस्तु = इंद्र । (४) अनृत = मूठ । धृतमान = पकड़ा हुआ । व्यवधानन = परदा । सपधान = आधार । (६) अवधान = जन्म । बनौकस = बंदर । बलीमुख = बंदर । सरितावर = समुद्र । पिता = वायु । यान = सवारी । आंग्र = पैर । कीना = रंज । (८) ओढ़यो = रोका । ताढ़यो = मारा । माढ़यो = मर्दन किया । (९) समध्यो = लड़ाई से बचा दिया । (१०) लाह = लाभ । लहक = मुँह खोलकर कह । दहक = बुराई । अहक = हौसला । अथ इति = आदि से अंत तक । (११) अंडज = ब्रह्मांड । जरको = थोड़ा भी । दंडधर = यमराज । (१३) ब्यलीक = विलक्षण । महरी = स्त्री । अलेख = गुप्त रूप से । हत ह्वै = हरण होकर । डहरी = रास्ता । (१४) अभिहारी कै = संचारण करके । पदचारी = पैदल कुंठित = निष्क्रमा । यारी = दोस्ती । (१५) बादी = शत्रु । वपु बादी = शरीर में फैली वायु । तटवादी = प्रतिद्वंद्वी । (१६) काम = दुर्बल । आराम = सुख । गेरन = घेरने को । (१७) अबाध = बे कहा । सुभाष्य = सुंदर कहा हुआ । भाने = भंग करना । (१८) आन = हठ । करसिकै = खिचकर । रसिकै = मन लगा-

कर। (१९) औठर=थोड़े में ही पसीजने वाला। (२०) शलम=फर्तिगा
 सुपथ्य = उचित आहार। गुलायो = बटा हुआ। वारन=लड़के।
 मतिवारन=बुद्धिमान। भुरायो = बहकाया हुआ। (२१) निगूढ़ =
 छिपा हुआ। विमति = मूर्ख। अव्यूढ = क्षीण। रुढ़ = सूखा। (२२)
 अनख = बुरा। जख = बोझ, भार। (२३) अजीतन = जो न जीते
 जायँ। अतीत्यो = बीत गया। अजायो = अजन्मा। गदूल = महा
 बलवान। (२४) विसेष्यो परै = दिखाई पड़ता है। साधै = स्वेच्छा
 से। दिव = स्वर्ग। दाधै = जलाना। (२५) अंशी = जिसमें से अंश
 निकाला जाय। अखिलंसी = पूरे अंशवाला। तपवान = तपस्वी।
 तप्यमान = जिसके पाने की इच्छा से तप किया जाय। बहिरंसी
 = माप से बाहर। ख्यात = प्रसिद्ध। (२६) बाख्यो = निवारण
 किया गया। (२७) नाक = स्वर्ग। लाह = लाही। घाई = फैला
 हुआ। खुटि = कम होना। (२८) सदो = शताब्दी। गरदो =
 पड़ना। (२९) छाम = पतली। छाई = कोयले की राख। रजाई =
 दुहाई। (३०) बेहरी = बिना सिंह के। रावे = आराधना किए।
 देह रीते = शरीर के नष्ट होने पर ही। रावे = आराधित।
 आराम = धरा। राम = स्थिर। (३१) दुरायो = इटाया गया।
 (३२) सदाप = उत्साह युक्त। दाधिबे = जलाने। काँधिबे =
 उठाने। (३३) चीखे = बुझे हुए। अदीखे = अक्षयित।
 बनारी = बंदर। तमारी = सूर्य। गहरि = गहरा। (३४)
 अभीखन = सज्जन। बरिष्ठ = उद्येष्ठ। बिरचौहि = बनाए हुए।
 (३५) परेख्यो = देखा। (३६) प्रचारे = गिरे हुए। अचारे =

व्यवहार । (३८) निधान = खजाना । प्रमाद = मद, अभिमान ।
नटि = अस्वीकार । (३९) अधीत = पढ़ा हुआ । निचै = समूह ।
अतिक्रम = मर्यादा का उल्लंघन । अभिक्रम = चढ़ाई
करने का । सक्रम = सिलसिलेवार । विकार = प्रभाव । (४०)
रोधि = रोककर । (४२) तौलि = विचार करके । चरपन
= जासूसी । (४४) सुपचित = अच्छी तरह पक कर । (४५)
अठान = अकार्य । (४६) जातना = कुश । अमानी = उपद्रव ।
(४७) निरत = संलग्न । चषिंगित = आँख के इशारे से । तिरत
= तैरता हुआ । अवर्त = गढ़ा । (४८) करख = क्रोध, उत्साह ।

—०—

पंचम सर्ग

(१) ईहा = इच्छा । समो = दोहा = द्वेष से ।
(२) अगोट = आगे आने वाली । निगूढ़ता = कठिनाई ।
अतीव = बहुत ज्यादा । छतीव = घायल सा । चषकोटन =
आँख की पुतरी से । गोठन = घेरे से । काँधि = कंधे पर
रखकर । कनगूरी = सिरे के । बातस = जोर को हवा । बगूरी =
बगोला, बवंडर । अंगूरी = अंगूर की शराब । (५) उलै = तेजी
से । पखवारे = पक्षवाले, तरफदार । बलै = बल से खींच कर ।
गुनाह = खराब । गंधवाह = वायु । बगर = महल । बहुलै =
विशेष । (६) कृतकृत्य = प्रसन्न । मजेज = संघर्ष ।
अकिगो = चकित हो गए । बरकिगो = राह छोड़
कर हट गए । (८) निबुकि = छूटकर । सुबुक = हलका ।

बुलंद = ऊँचा । अवकाश = अंतर । सानुमान = अंदाज से ।
 रोधन को = रोकने को । सोधन = चुकाने को । (९) गरुत =
 तेजी से । (१०) रातो = लाल । अगहुर = आगेवाला, किनारे
 का । कुलसि = खराब दिखाई देने लगे । जल जच्छी = जल में
 रहनेवाले यत्न । उलसि = उबल गए । अलोड़ि = मथकर ।
 अन्धि = समुद्र । (११) दाहाकार = ताजिया की शकल का ।
 प्रदाहाकार = जलानेवाली मूर्ति । निखर = बिना तृण के ।
 छोर = सीमा । अरगावा को = बिलगाने को । (१२) अखंडल =
 सूर्य । चंड रव = कठोर शब्द । (१३) सिहलै = फड़फड़ाने
 लगे । नीड़ = घोंसला । बयस्क = बालिग । (१४) प्रदाहन =
 जोर से जलाकर । खरचाल = फूस का ढेर । मलाल =
 रंज । (१५) जखीरा = ढेर । जातरूप = सोना । सतर =
 तह, टुकड़ा । मेचक = पीला । बिखानन = शृंग ।
 निखात = ठीक ठीक । (१६) अपहत = छीने हुए । प्रतत्व =
 मुख्य भाग । लावक = लावा । छावक = जले हुए । (१७) लट =
 केश । पट = वस्त्र । अगौरी = आगे आगे । कौरी = गोदी ।
 तूमि = नोचकर । (१८) आरी = तंग हुई । निरीह = बिना
 इच्छा के । निरवेद = उदासी । नेवर = नूपुर । नेवारि = हटाकर ।
 हरुपे = हल्के होकर । खाँगी = छीजती । (१९) पगारी = प्रांत,
 पक्षी । दवारी = आँच । हेला = तुच्छता से । (२०) कुररी =
 कौँच पक्षी । (२१) सुमनस = देवता । घातिन = मारने
 वाले । जवाल = अवनति । कामिल = पूरा । कमाल = निपुणता ।

अंतक = नाश करनेवाला । (२२) प्रचुर = विशेष । प्रलाप = अंठ
 बंड बकना । अतीता = बीता हुआ । सताप = बरजोरी ।
 अनुनीता = लाई हुई । अधीता = पढ़ी हुई । (२३) विकटा =
 कर्कशा । कटासी करि = बात काटकर । हँडेरी = उपद्रवी ।
 बलबीता = गाली विशेष । (२४) जाती = अपने वर्ग का ।
 बिजाती = अन्य जाति । अपघाती = धोखा देनेवाला । कलुख =
 पाप । कुलस्यो = बुरी तरह से दिखाई देना । सुलस्यो =
 अच्छी तरह दिखाई पड़ना । छदन = फफोला । छपट्यो =
 चिपक जाना, उठ जाना । वपुख = शरीर, देह । (२६) = हरे
 हरे = प्रायः दुःख या आश्चर्य के समय लोग कह उठते हैं “हरे
 हरे” या “राम राम” । (२७) हहरी = डर गई । चष लाजन =
 चक्षु-लज्जा । (२८) पावा = पैर । मान = तानकर । उदबेग =
 चित्त की आकुलता, जोश । खावा = भुरकुल हुई वस्तु । गूनै =
 गूँधने । (२९) भार = बोझ । भार = भाड़ । (३०) सुराग =
 पता । निछारि = निकिया कर । (३१) दुलहैबे तें = उभाड़ने से ।
 सिखि = जठराग्नि । अनखाए = कुपित हुए । पचहैबे = पचाना ।
 हरि = नारायण । हरि = बंदर । (३२) निरबंध = बिना रोक टोक ।
 दढ़ै लगी = दहलाने लगी । बिभीषिका = हृदस, भयावनापन
 (३३) निबरिगे = निपट गए । परत = तह । (३५) तरखै =
 प्रवाह । सुमनस = देवता । सुमन = फूल । (३६) अवतिस्य =
 कल्याणकारी । प्रग्यावान् = विलक्षण बुद्धिवाला । व्यवधान =
 परदा । उपधान = तकिया । (३७) परिचायक = परिचय देने-

वाला । बिभास = अवतार । सितकंठ = शंकर । प्रनिधायक = उपासक । घायक = घाव देनेवाला । निधायक = आश्रय देनेवाला । बहुकंठ = अनेक कंठों वाला अर्थात् उनचास प्रकार के वायु । (३८) दोचत = दबाना । खाम = ठहरे हुए, कच्चे । बलाढ्य = बलवानों से भरा । लाम = लड़ाई की युक्ति करना । (३९) दुस्तर = कठिन । जनेक = एक जन, अकेले । बरग = जाति, कोटि । प्रगति = प्रवेश, चलनेका अधिकार या सामर्थ्य । सरग = अध्याय । पारत = गिराते हुए । परग = पैर । (४०) धुरंसी = धूल में खेलनेवाला । अवतंसी = जन्माकर । स्वयमंसी = अपना हिस्सेदार । (४१) प्रसस्त = लंबी चौड़ी । व्यस्त = व्याकुल । दह्यमान = जला हुआ । मुह्यमान = मुर्झाए हुए । अरकी = अँटकी हुई । खचर = आकाश में चलनेवाले । (४२) कलाख = भँवाए । निराट = एकदम । निखरे = नंगे । (४३) अंदरन = भीतर । भ्रहिगे = झुलसकर गिर गए । चलंग = नंगा । कुटेई = बुरी चाल । पेयी = पीनेवाले । (४७) अछत = बिना घाव । अछत = रहते हुए । सछत = जखमी ।

षष्ठ सर्ग

(१) स्वयमागत = अपने से आया हुआ । ममात = मातृ-स्नेह । समोइ = भिगोकर । (३) अलच्छ = छिपकर । (४) कसीस = खिंचावट । तात = गरम । बिछोही = निर्दयी । पत = बज्जा । (५) अपत = बे आबरू । (६) सत्रुहन = शत्रु को मारने-

वाले । (७) बिसूरि = रोकर । (८) पामर = नीच । (९) बिजेतन =
 विजयी । सुमनसजेतन = देवताओं को जीतनेवाले ।
 (१०) अंकित = लिखित । चरेह = चित्र । उसीजे = मिट गए ।
 जात = उत्पन्न । (११) पर = परंतु । परताप = दूसरों को दुःख
 देना । अधौघ = पापों का समूह । अनुतापन = पश्चात्ताप । (१२)
 दयाद = संबंधी । (१३) पाक = इंद्र । नायक = स्वामी, मुखिया ।
 रुसायो = नाश किया । खलखेटन = दुष्टों को । नखोंछु =
 रूरोचकर । अवनीरज = पृथ्वी की धूल । मोछु = छोड़ना ।
 परिधि = घेरा, चहार-दीवारी । (१४) बलित = बोझी हुई ।
 रेहि = अंकित करके । (१५) सुखेन = सुख से । घले =
 रुके, ठहरे । (१६) जुरावरी = बलवत्ता । (१७) सियरैहों =
 जुड़ाऊँगा, ठंडा होऊँगा । (१८) पायक = सेवक । छोर =
 किनारा । छाय = सीमा जो निश्चित की गई हो । (१९)
 सौवरी = अंधकार में छिपी । उतावरी = जल्दी । (२०)
 फनि सों = सर्प के फन के आकारवाले केश से । गोय =
 छिपकर । विरद = बढ़ाई । (२१) बदानी = बदकर । प्रमानी =
 प्रमाणित । कोरि = विनती से । (२२) बिरत = भूला । निहित =
 छिपी हुई । (२३) अबस = व्यर्थ । अवस = अवश्य । हवस =
 आकांक्षा । (२४) स्वपद = अपने ठिकाने । (२५) बंदिनी =
 बंदना की जाती हुई, प्रणाम की जाती हुई । नखतपथी = नक्षत्रों
 का रास्ता । (२६) मगन = राहों से । गोगन = इंद्रियों में ।
 हरि = बंदर । सगन = अपने ।

सप्तम सर्ग

(२) मान = नाप, लंबाई । (४) मनमान = इच्छानुकूल ।
 जबमान = वेग से । (५) मगन = लीन, मिलकर । बलाका =
 बरसात में उड़नेवाले सफेद बगुले । बनोत = बनाते हुए ।
 सलाका = सलाई । (७) बीचिनि = जल की लहरें । फेनिल = फेन
 से भरकर । बुद्धद = पानी के फेन के बुल्ले । ऊर्मि = तरंग ।
 (८) तुमुल = हलचल । (९) महदीयता = बढ़ाई । नक्र = नाक ।
 तिमिंगल = हेल मछली । भ्रख = मछली । रखेला = रखे हुए ।
 (१०) नियुज्यमान = लगाई हुई । निरोध = रोककर । इयत्ता =
 सीमा, लंबाई, दौड़ । (११) निखूट = एकदम से । अंड = अंडा ।
 भंड = उपरी छिलका । (१२) बैनतेय = गरुड़ । (१३) हितौन
 लागे = हिताई दिखलाने लगे, प्रेम प्रकट करने लगे । रितौन
 लागे = प्रगट करने लगे । (१४) अधरा = ओठ । छरा =
 मालाकार । (१५) अरुण = सूर्यनारायण । (१६) कूटन तैं =
 पहाड़ों से । (१७) दराज = लंबा । सी को = सीता को । लाह =
 लाभ । (१८) गंधवाह = वायु । अजैया = अजन्मा, राम ।
 लुगैया = स्त्री, पत्नी ।

—

अष्टम सर्ग

(१) पुरहूत = इंद्र । विधूत = सत्यवादिता । (२) गति =
 राग । (३) चावरे = उमंग से । पूर = प्रवाह । (४) जमान =

नाप से बाहर । (५) छति = हानि । (६) मनीसी = बुद्धिमान् ।
 स्वराहि = शीघ्र । स्वल्प = छोटा । (७) अखोट = उत्तम प्रकार
 के । कैफ = स्वल्प मात्र भी । (८) भा = प्रभा । (९) पोहे =
 पिरोए । रुचिरोहे = आकर्षित करनेवाले । (१०) अनीठि = रुचि
 से भरी । (११) बहुलाई = अधिकता । बीथिका = गली । बोथी =
 सड़क । (१२) अँटिया सो = अँटककर, भिड़कर । (१३) तरास =
 किस्म, प्रकार । यारन = मित्रों की । (१४) ओपती = शोभा देती ।
 बारन = हाथी । (१६) पल मैं = क्षण मैं । पल = मांस । (१७)
 चिकटा = मैली कुचैली । (१८) धिया = होश, बुद्धि । (१९) गुरु
 घात = जोर की मार । (२०) रोसति = क्रोध करती । (२१) गोहन =
 पास में । (२२) लुंद = लोंदा, गोला । बर = श्रेष्ठ । द्विज = पक्षी,
 ब्राह्मण । (२३) रोधे = रोके । (२४) घटाश्रुति = कुंभकर्ण ।
 जामुनमाली = जंबुमाली । कच्छ = कमरा, कोठरी । (२६)
 सकास = पास । गृहाराम = नजरबाग । (२७) प्रमदाटवी =
 प्रमदावन । चाली = नटखट । (२८) अगोट = आगे, हाशिया ।
 रविसेँ = पटरी, रविश । (२९) तनपोहत = पुष्ट करते हैं ।
 (३०) सुबुकी = हल्की । कितान = किस्म । रसी = ठहरी ।
 अरसी = अगूँठे का गहना । (३१) बीरुध = वृद्ध । बीचे =
 छँटे हुए । (३२) प्रमदाकुल = मद से मत्त । (३३) सुदेस =
 अच्छे स्थान पर । (३४) चतुष्पथ = चौमुहानी । समुहारे =
 चौमुहानी के बीच में । तार के = किस्म के । मेह = वर्षा ।
 बीवन = जल । (३५) बुहारी = बटोरना, भाड़ू देना । (३६)

मदान्वित = नशे में । मदनान्वित = काम से आक्रांत । दोषित = दुषित, व्यग्र । रोचित = पसंद । (३७) भोजि = अपने सिर भार ले कर । नोज = अभी । (३८) पदचारत = टहलते । दृढ्यो = जला हुआ । जढ्यो = जड़ हो गया । (३९) सिखराई = हड़ । भूखि = शोभा देना । (४०) ललामिनी = परम सुंदरी । मंजु = मधुर । कलामिनी = बोझनेवाली । स्यामा = युवती । छामा = क्षीण । (४१) अनुजोजित = मुस्तैद की हुई । मनोमत = इच्छानुकूल । विकटाकृति = कुरूप । (४२) हरिनीन = सिद्दिनियों । हरिनी = मृगी । रतिवाली = शोभावाली । बिबसी = बेबस । (४३) अनैसी = बुराई । (४४) निखरयो = सफाई के साथ । (४५) बपु = शरीर । तुल्लाय कै = बनाकर । खेचर = राक्षस । पोटी = थैली । (४७) पूत = पवित्र । प्रतीता = विश्वास रखनेवाली । नीता = लाई हुई । (४८) अवरेखति = चिह्न खींचती है । (४९) सद्य = घर । (५०) गतायु = मरकर । अचीत = चिंता से बाहर । (५१) खोट = दुष्ट । (५१) तिनै को = तृण का । बिसेसन = उपाधि । अथोर = ज्यादा । (५२) अगरी ही = आगे ही से । (५३) रिहिन = लोमड़ी । (५४) बिनसेरो = नाशमान । ईसरी = ईश्वरी । (५५) त्वेष = ताव से । (५६) सोदरी = सगी बहिन । (५७) हल्लावति = अत्याचार । (५८) जुहारत = सुनाकर । (५९) अगेरि = आगे हुलाकर । (६१) नटाई = दुष्टता करके । अँदेसै = खटका । निराइ = हटाकर । (६३) अभीखन = सज्जन; बिना भ्रमट के । (६४) नैकै = मुकाबर । प्रनै कै = प्रेम करके । अनुनै

= चिरौरी । (६५) मैय्यत = मृत्यु । (६६) दुरेखत = इटाते, हुए ।
 अवरेखत = विचार से । (७०) चिर = विशेष । (७१) सीतम =
 दुःख । सिथिलीते = ढीले । (७२) उरायत = हृदय । सुबाद =
 बोलने में । बहुलाई = विशेषता । गरुआई = गांभीर्य । कमात
 = कम होता; छँटता । (७४) जनस्थल = जनस्थान, पंचवटी के
 पास का स्थान विशेष । अनुहारे = नकल । (७५) धूत = मूठ ।
 (७८) सीवित = सीमित; जिसकी सीमा बाँध दी गई हो । रीतत
 = खाली हो रही है । पनाह = छाया । अतीतत = बीती हुई
 अर्थात् मृत । (८०) सामा = सामग्री । (८१) रकसीस = राक्षस
 गण । कसीस = जोर-जुल्म । (८३) रूरो = सुंदर । कँगूरो
 = चोटी पर । (८४) बेस = रूपी । सबेस = जड़ सहित । (८६)
 मुर = मुर नामक राक्षस जिसको विष्णु ने मारा था । निकरै =
 सेना सहित । हूते = हवन किए गए । (८७) बल = तरीका । विधेय
 = करने लायक । (८८) सुतारे = ठीक तरह से । (८९) ठिठुहारे
 = सिकुड़े से । समनै = यम । (९०) विकल्प = संदेह । जल्पत =
 बोलते । नेरे = समीप । (९१) मनाक = मंद, थोड़ा । बराक =
 बेवकूफ । कमवायो = कम कराया । (९२) कुख्याति = निंदित
 कार्य । बेह = विशेषता । (९३) अपचै = नाश । (९४) अवरोध =
 रुकावट । रोध = बंधन । (९७) परकोट = छरदिवाली । मूल =
 जड़ । कोर लौं = ऊपर तक, चोटी तक । गोर = कब्र,
 समाधि । (९८) काकुल = केश, बाल । (१००) सरितावर
 = समुद्र । अभिक्रम = शत्रु पर चढ़ाई । उपक्रम = आरंभ ।

अतिक्रम कै = लॉंघकर । (१०२) रोचत = पसंद लायक । (१०४) काकली = चहचह, पक्षियों की बोली । (१०५) अनच्छत = बिना घाव । अधरच्छत = दांत से ओठ दबाकर । (१०६) सुभावन = अच्छे भाव से । हित = प्रेम करके । अनुभावन = बढ़ाई या प्रभाव । सुविभावन = अच्छी बात की विशेष चिंता । (१०७) प्रमानी = परीक्षा की हुई । निदा दै = आवाज देकर, गरजकर । (१०८) राधि = आराधना करके । (११०) अभिप्रेत = चाहा हुआ ।

नवम सर्ग

(१) हेला = हल्ला करते हुए सहज ही में आ जाना । (२) पच्छक = पक्षपाती । बरिष्ठकाय = मोटा ताजा । (३) रुठियाइ = रुठकर, क्रोध में । हावो = जबरदस्ती । जबर = जुल्म । सिताबो = जल्दबाजी । (४) मनुहार = खुशामद । प्रहृष्टमान = प्रसन्नता से भरे हुए । (५) सहेट = पास । सदमै = तकलीफ । (६) नीठि कै = ज्यों त्यों करके । (७) यथातथ्य = ज्यों का त्यों, पूरा पूरा । अकथ्य = कहने के बाहर । लोयनि मै = नेत्रों में । लुनाई = सुंदरता । सम्बै गई = समा गई, भर गई । खराई = सूखी हुई । खेह = धूल । छपाई = छिपी हुई । (१०) कहरै लगी = जुल्म करने लगी । गहरै = गहरी होने लगी । (११) गोवत = छिपाता है । (१२) नियंत्रित = नियत, मुस्तैद । तंत्रित = बंद किया हुआ । पदजंत्रित = ताले के भीतर । निदान = कारण । अभियान = चलने

की क्रिया । अभिमंत्रित = मंत्र से कीला हुआ । (१६) समया-
कुल = समय के अनुसार, मोह में भरकर । (१८) नैसुक् = थोड़ा ।
सहारथो = चित पर चढ़ाना । सोम अंसिन = चंद्रमा के वंशज ।
(१९) तूल = रुई । (२४) परजन्य = दूसरों के लिये । जायो =
जन्म लिया । (२५) जघन्य = खराब । नगन्य = गिनती से बाहर,
तुच्छ । (२६) आवरन = आच्छादन ओढ़ना । कनकावरन =
सोने के समान रंग । सावरन = सूर्य । शिष्य = चेला । अवतिष्य =
कल्याणकारी । परजन्य = बादल, मेघ । (२७) जन्य = पैदा,
वास्ते । अन्य = दूसरा । (२८) अच्छरन = अशरण, जिसका
सहायक कोई न हो । सामगान = सामवेद । प्रणवच्छरन
= ओंकार से । सुगाता = अच्छा गानेवाला । पच्छिराज =
गरुड़ । प्रमद = गर्व । प्रमन्य = प्रमाणित । मन्य = माननेवाले ।
कच्छमान = किनारा । गुरु = सूर्य । गच्छमान = चलनेवाले ।
लच्छमान = दिखाई पड़नेवाले । प्रच्छन्न = छिपे हुए । (२९)
वेह = विशेषता । (३०) वहि = ढोकर । मूरि = मूल, जड़ ।
(३१) खसकि = जल्दी । खगेस = गरुड़ । (३२) स्रष्टा =
सृजन करनेवाला । संकुल = कुल । द्रष्टा = देखनेवाला । संहति =
नाश, संहार । समष्टि = संपूर्ण । गेय = गाई जानेवाली । गाता =
गानेवाला । चषक = शराब का प्याला । (३३) भासमान =
प्रकाशमान । अविनाशमान = अविनश्वर । जायो = जन्मा हुआ ।
(३४) पौरि = दरवाजा । प्रसाद = प्रसन्नता । अवसाद =
नशा । (३५) अवास = घर । अमैया = अँटनेवाला, रहनेवाला ।

नाखु = नाराज । (३६) पदयात = पदचिह्न । रोधना = रुकावट ।
 रचाव = बनावट । सु रग में = नसों में । सँचाव = उत्पन्न, प्रवेश ।
 भग = कल्याण । (३७) प्रस्तुत = उपस्थित । पतीजै = विश्वास ।
 (३९) पद = दो । नभ = शून्य । व्योम = शून्य । चख = दो ।
 लोक = चतुर्दशी । (४०) महन = मथनेवाला । लहन = पाने को ।
 लाह = लाभ ।

ग्रंथ परिचय

(२) बहन = ढोनेवाला । सहन = सरल, आँगन के ऐसा
 साफ । सुबोधन = विद्वान । गहन = कठिन । अबोधन = कम
 पढ़े । बिबोधन के = मूर्ख के । (३) अवदात = स्वच्छ । आनद के
 बन = काशी । (४) गदाही = फकीर या खाली हाथ । असमा
 = आसमान । समा = दृश्य । समा = अंतर्धान, नाश । कस मा =
 दबाव में । रस मा = रसों के फेर में, पेयाशी में । जस =
 अश, कीर्ति । (५) दनुज = राक्षस, निंदित काम करनेवाला,
 दुष्ट । (६) जात = उत्पन्न । अघब्रान = पापों का समूह । ओक =
 घर, पास ।



